की ब्रह्माणी और छाया की छत्रेश्वरी रक्षा करे, धर्मचारिणी अहङ्कार, मन और बुद्धि की रक्षा करें ॥ ३६ ॥ प्राण, अपान, व्यान, उदान, और समान

शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ।
अहङ्कारम्मनोबुद्धिं रक्षमे धर्म्मचारिणी ३६
प्राणापानौ तथा व्यानमुदानञ्च समानकम् ।
(वज्रहस्ताचमेरक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना ॥
रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी ।

इनकी वज्रहस्ता रक्षा करे और प्राणों की कल्याणशोभना रक्षा करे ॥ ३७ ॥ रस, रूप, गन्ध, शब्द तथा स्पर्श की रक्षा योगिनी करे सत्व रज

क०

२५

और तम की नारायणी सदा रक्षा करे, ॥ ३८ ॥ आयु की बाराही और धर्म की वैष्णवी रक्षा करें यश, कीर्त्ति, लक्ष्मी, धन और विद्या की चाक्रिणी

सत्त्वं रजस्तमश्चैवरक्षेन्नारायणी सदा ३८
आयूरक्षतुवाराही धर्मं रक्षतुवैष्णवी ।)
यशःकीर्तिंच लक्ष्मीं च धनंविद्यां च चाक्रिणी।
गोत्रामिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चंडिके।
पुत्रानूरक्षेन्महालक्ष्मीभार्य्यां रक्षतु भैरवी ॥

रक्षा करे ॥ ३९ ॥ गोत्र की इन्द्राणी रक्षा करे और मेरे पशुओं की चण्डी रक्षा करे मेरे पुत्रों की महालक्ष्मी रक्षा करे स्त्रियों की भैरवी रक्षा करे॥४०॥

रास्ते में सुपथा देवी मार्ग में कुशल करने वाली रक्षा करे, राजद्वार में महालक्ष्मी चारों ओर (सब जगह) विजया रक्षा करे ॥ ४१ ॥ जो स्थान

पंथानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा ।
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता ॥
रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु ।
तत्सर्वं रक्ष मे देवी जयन्ती पापनाशिनी ४२
पदमेकं[1] न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।

रक्षाहीन कवच से वर्जित है उन स्थानों में पापनाशिनी जयन्ती देवी रक्षा करे

---

१ क्षणमात्रमपि देवी स्मरणं विनानक्षपणीयम् । तदुक्तं पुराणेषु । स्वपंस्तिष्ठन्व्रजन्मार्गं प्रलपन्भोजनेरतः ॥ कीर्तयेत्सततं देवीं सवैमुच्येत बन्धनात् ॥

॥४२॥ यदि अपने कल्याण की इच्छा करे तो एक पद भी बिना कवच के न जाय ॥४३॥ कवच से युक्त जहाँ जहाँ जाता है वहाँ वहाँ धन लाभ विजय और सब कामना सिद्ध होती है ॥ इस पृथ्वी पर मनुष्य जिन जिन कामों

कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति॥४३॥
तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।
परमैश्वर्य्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ४४
निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः।

को बिचारता है उन २ कामों को पाता है और बड़े बड़े अतुल ऐश्वर्य को पावेगा ॥ ४४ ॥ मनुष्य लड़ाई में पराजित न होकर निर्भय होता है और

कवच धारण करने से तीनों लोक में पूज्य हो जाता है ॥ ४५ ॥ देवताओं को भी यह देवी का कवच दुर्लभ है जो इसे तीनों काल निश्चल हो श्रद्धा

त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ॥
इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ।
यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ॥
दैवीकला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ॥४७॥

पूर्वक रोज रोज पढ़ता है ॥४६॥ उसमें दैवीकला हो जाती है तीनों लोक में अपराजित और अपमृत्यु से रहित हो सौ वर्ष जीता है ॥४७॥ (लूता) मकड़ी

और फोड़ा आदि सब व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं, स्थावर, जंगम तथा कृत्रिम विषादि ॥ ४८ ॥ और सब अभिचार पृथ्वी में मन्त्र, यन्त्र भूचर,

नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः।
स्थावरं जङ्गमञ्चैव कृत्रिमञ्चापि यद्विषम् ४८
अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले।
भूचराः खेचराश्चैव कुलजाश्चौपदेशिकाः ४९
सहजाः कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा

खेचर, कुल में जो उत्पन्न और उपदेश से प्राप्त व्याधि ॥४९॥ समय के उत्पन्न हुये, कुल में उत्पन्न हुये और गण्डमाला तथा डाकिनी, शाकिनी, अन्तरिक्षचर, महाबली घोर डाकिनियाँ ॥५०॥ ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष गन्धर्व राक्षस,

ब्रह्मराक्षस, वैताल, कूष्माण्ड और भैरव आदि ॥ ५१ ॥ जिसके हृदय में

अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः॥
ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्ष गन्धर्व राक्षसाः।
ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ५१
नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते।
मानोन्नतिर्भवेद्राज्ञस्तेजोवृद्धिकरम्परम् ५२
यशसा वर्द्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले।

कवच हो उसके दर्शन से नष्ट हो जाते हैं, मानोन्नति होती है और राजा के तेज को अधिक बढ़ाने वाला है ॥ ५२ ॥ जो मनुष्य पहिले कवच पाठ

क० करके सप्तशती पाठ करता है उसका पृथ्वी भरमें यश और कीर्ति बढ़ती है ॥ ५३ ॥ जब तक पृथ्वी पर शैल, बन और वृक्षादि हैं तब तक उसके

२८ जपेत्सप्तशतीं[1] चण्डीं कृत्वा तु कवचम्पुरा ५३
यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम् ।
तावत्तिष्ठति मेदिन्यां संततिः पुत्रपौत्रिकी ५४
देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ।
प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामाया प्रसादतः ॥

पुत्र पौत्रादिक सन्तति स्थित रहती है ॥५४॥ वह पुरुष मरने पर महामाया के प्रसाद से ऐसे स्थान को जाता है जो देवताओं को भी दुर्लभ है ॥ ५५ ॥

---

१ अनेनास्य कवचस्य सप्तशत्या अङ्गत्वं सूचितम् ।

(लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते) ५६

इतिवाराहपुराणे हरिहरब्रह्म विरचितं देव्याः कवचं समाप्तम् ॥ १ ॥

और परम रूप को प्राप्त करके शिवजी के साथ आनन्द करता है ॥ ५६ ॥

अथ अर्गलास्तोत्रम् ।

ॐ अस्य श्री अर्गला स्तोत्रस्य विष्णुः ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीदुर्गादेवता ह्रां वीजं ह्रीं शक्तिः स्वाहा कीलकं श्री त्रिगुणात्मिका चण्डिका दुर्गा प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ।

❀ अथ ध्यानम् ❀

दत्तेचक्रशरासनं च फलकं मुद्रांकरैस्तर्जनीं ।
वामे संदधतीं दलेषु सहितं खड्गत्रिशूलंगदाम् ॥

---

१ षट्पञ्चाशच्चश्लोकानां संग्रहः कवचेकृतः ।

अ० सन्नद्धा विविधायुधैः परिवृतां मन्त्रैः कुमारैर्जनैः ।
ध्यायेदीप्सितदायिनीं त्रिनयनां सिंहाधिरूढांशिवाम् ॥
२६ याच्चापि त्रिविधाख्याता सप्तधासैव लोचना ।
यस्याभेदाह्यनन्ताश्चतन्माहात्म्यंसमुच्यताम् ॥

ॐ नमश्चण्डिकायै ।

जयंती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गाक्षमा शिवा धात्री स्वाहास्वधा नमोस्तुते
जय त्वन्देवि चामुण्डे जयभूतार्तिहारिणि ।

ॐ नमश्चण्डिकायै-जयन्ती, मङ्गला, काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा, धात्री, स्वाहा, स्वधा, आदि को नमस्कार है ॥ १ ॥ हे चामुण्डे ! हे प्राणियों के कष्ट नाश करने वाली जय करो । हे सर्वंगते !

हे देवी ! हे कालरात्रि ! जय करो आपको नमस्कार है ॥२॥ हे मधुकैटभ को नाश करने वाली ? ब्रह्म को वर देने वाली ! आपको नमस्कार है।

जय सर्वगते देवि कालरात्रिनमोस्तुते ॥ २ ॥
मधुकैटभाविद्रावि विधातृवरदे नमः ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ॥३॥
महिषासुरनिर्णाशिभक्तानां सुखदे नमः ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ॥४॥

रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो ॥ ३ ॥ महिषासुर को नाश करने वाली ! हे भक्तों को सुख देने वाली । आपको नमस्कार है। (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो ॥ ४ ॥ हे

रक्तबीज को बध करने वाली ! हे देवी ! हे चण्डमुण्ड को विनाश करने वाली ! (रूप दो, जय दो, यश दो शत्रुओं का नाश करो) ॥५॥ हे शुम्भ

 रक्तबीजवधे देवि चण्डमुण्ड विनाशिनि ।
रूपन्देहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ॥५॥
शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनी
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ॥६॥
वन्दितांघ्रियुगे देवि सर्वसौभाग्यदायिनि ।

निशुम्भ और धूम्राक्ष को मर्दन करने वाली ! (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं को नाश करो) ॥६॥ हे बन्दित चरण कमलों वाली ! हे सर्व

सौभाग्यदायिनी ! (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं को नाश करो)
॥ ७ ॥ हे अचिन्त्यरूप चरित्रों वाली ! हे सब शत्रुओं का नाश करने

रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ॥७॥
अचिन्त्य रूपचरिते सर्वशत्रु विनाशिनी।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ॥८॥
नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चंडिके दुरितापहे।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ॥९॥

वाली ! (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो ! ॥८॥ हे
चण्डिके ! हे दुःख नाश करने वाली ! हमेशा भक्ति पूर्वक मनुष्यों
को तुम (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥९॥ हे

अ० चण्डिके ! हे व्याधि नाश करने वाली ! भक्ति से आप स्तुति करने वाले मनुष्यों को (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो ॥

३१ स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चंडिके व्याधिनाशिनि
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ।१०।
चंडिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ।११।
देहिसौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमंसुखम् ।

॥ १०) हे चण्डिके ! जो आपको निरन्तर भक्ति पूर्वक पूजते हैं उन्हें (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥११॥ हे देवि ! हमें सौभाग्य, आरोग्यता, तथा परम सुख दो और (रूप दो, जय दो, यश

दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥ १२ ॥ हे देवी ! शत्रुओं का नाश करो और विशेष बल दो, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश

रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ।१२।
विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ।१३।
विधेहि देवि कल्याणं विधेहिपरमांश्रियम् ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ।१४।

करो ॥ १३ ॥ हे देवि ! कल्याण करो और अच्छी सम्पत्ति दो । (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥१४॥ हे सुरासुर के शिरोरत्नों

अ० से स्पर्शित चरणों वाली ! हे अम्बिके ! (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥१५॥ मनुष्यों को विद्वान्, यशस्वी और लक्ष्मीवान्

३२ सुरासुर शिरोरत्न निघृष्टचरणेऽम्बिके ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि।१५।
विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनंकुरु।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि।१६।
प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने चण्डिके प्रणतायमे ।

करो।(रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो)॥१६॥हे उग्र दैत्यों का घमण्ड नाश करने वाली ! चण्डिके ! मेरे समान नत पुरुषों को (रूप

दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥ १७ ॥ हे चार भुजा वाली ! हे ब्रह्मा से स्तुति की गई ! हे परमेश्वरी ! (रूप दो, जय दो,

रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि। १७।

चतुर्भुजे चतुर्वक्त्र संस्तुते परमेश्वरि ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि । १८।

कृष्णेनसंस्तुते देविशश्वद्भक्त्या सदाम्बिके ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि । १६।

यश दो और शत्रुओं का नाश करो ॥ १८ ॥ हे श्रीकृष्णचन्द्र से भक्ति पूर्वक निरन्तर स्तुति की गई ! हे अम्बिके ! हे देवी ! (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥ १६ ॥ हे शिवजी से स्तुति की

अ० गई परमेश्वरी। (रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का विनाश करो) ॥२०॥ हे इन्द्र से उत्तम भाव से पूजित हे परमेश्वरि ! (रूप दो, जय दो,

३३ हिमाचल सुतानाथसंस्तुते परमेश्वरि ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ।२०।
इन्द्राणी पतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि।२१।
देवि प्रचण्डदोर्दण्ड दैत्यदर्प विनाशिनि ।

यश दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥ २१ ॥ हे अपने उग्रभुजा रूपी दण्डों से दैत्यों के अभिमान को नाश करने वाली ! हे देवि ! (रूप दो

जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो) ॥२२॥ हे देवि ! हे भक्तों को अत्यन्त आनन्द देनेवाली अम्बिके ! (रूप दो, जय दो, यश दो और

रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ।२२।
देवि भक्तजनोद्दाम दत्तानन्दोदयेऽम्बिके ।
रूपंदेहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषोजहि ।२३।
पत्नीं मनोरमांदेहि मनोवृत्तानुसारिणीम् ।
तारिणीं दुर्गसंसार सागरस्यकुलोद्भवाम् ।२४।

शत्रुओं का नाश करो) ॥ २३ ॥ आज्ञाकारी (मन के अनुसार चलने वाली) संसार जो अत्यन्त कठिन है उससे पार करने वाली और सत्कुल में उत्पन्न सुन्दरी पत्नी दो ॥ २४ ॥ इस स्तोत्र को पढ़कर जो मनुष्य

इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः।
सतुसप्तशतीसंख्यावरमाप्नोतिसम्पदाम् २५

इति मा० पु० अर्गलास्तोत्र समाप्तम् ।

महास्तोत्र (सप्तशती स्तोत्र) को पढ़ता है वह सप्तशती संख्या के अनुसार सम्पत्ति को पाता है ॥ २५ ॥

अथ कीलकस्त्रोत्रम् ।

ॐ अस्य श्री कीलक स्तोत्र मन्त्रस्य ईश्वर ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः त्रिगुणात्मिका चण्डिका देवता विशुद्ध ज्ञान देहायेति बीजं त्रिवेदीतिशक्तिः दिव्य चक्षुष इति कीलकम् श्री त्रिगुणात्मिका प्रीत्यर्थे जपे पाठे विनियोगः ॥

---

१ महास्तोत्रं सप्तशती स्तोत्रम् । अनेनार्गलास्तोत्रस्याङ्गत्वं सूचितम् । पञ्चविंशतिसंख्यानां श्लोकानामत्रसंग्रहः ।

❀ अथ ध्यानम् ❀

शोणप्रभं सोमकलावतंसं पाणिस्फुर त्वं च शरेषु चापम् ।
पाणिप्रियं नौमि पिनाकपाणिंकोणत्रयस्थं कुल देवतां च ॥

ॐ नमश्चण्डिकायै ॥ मार्कण्डेयउवाच ॥

विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदी दिव्यचक्षुषे ।
श्रेयः प्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे १
सर्वमेतद्विजानीयान्मन्त्राणामपिकीलकम् ।

मार्कण्डेय बोले-विशुद्ध ज्ञानस्वरूप वेद त्रयीरूप, दिव्य तीन नेत्र वाले अर्धचन्द्र धारण करने वाले श्री शिवजी को कल्याण प्राप्ति के लिये नमस्कार है ॥ १ ॥ जो मनुष्य जप में तत्पर हो मंत्रों के इस सम्पूर्ण

कीलक स्तोत्र को जानता है वह कल्याणको पाता है ॥२॥ जो मनुष्य इससे देवी की स्तुति करता है उसको उच्चाटन आदि सब वस्तु केवल स्तोत्रही

सोपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः ।२।
सिध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि ।
एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्रमात्रेण सिध्यति ॥ ३ ॥
न मन्त्रो नौषधं तत्र न किंचिदपि विद्यते ।
विना जाप्येन सिध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम् ।४।

से सिद्ध हो जाते हैं ॥ ३ ॥ ऐसा न तो कोई मंत्र है न औषधि है और न तंत्र है बिना जप किये ही सब उचाटनादि सिद्ध हो जाते हैं ॥ ४ ॥

१ निरन्तरम् ।

महादेवजी ने इस शंका से कि लोक की सब वस्तु सिद्ध हो जायगी इस लिये इन सभों को कील दिया है ॥ ५ ॥ उन्होंने (शिवजी ने) इस चंडिका

समग्राण्यपि सिद्धयन्ति लोकशंका मिमांहरः
कृत्वा निमंत्रयामास सर्वमेवामिदं शुभम्॥५॥
स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तञ्चकार सः।
समाप्नोति सुपुण्येन तां यथावान्नियन्त्रणाम् ६
सोऽपि क्षेम मवाप्नोति सर्वमेव न संशयः।

के स्तोत्र को गुप्त कर दिया अतएव मनुष्य इस कीलित पदार्थ को बड़े पुण्य से पाता है ॥ ६ ॥ उसे कल्याण मिलता है इसमें कुछ संशय नहीं है जो कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी और अष्टमी को उपासक सावधान होकर

न्याय से उपार्जित अपने धनको भगवती को समपर्ण करके कहे, हे देवि !
यह सब धन मुझसे अर्पण किया हुआ आपका है इस प्रकार धनको देय,
और संसार यात्रा (खान पान बिहारादि सब व्यय) के लिये फिर देवी

कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः॥
ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषाप्रसीदति ।
इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥८॥
यो निष्कीलां[1]विधायैनांनित्यं जपतिसंस्फुटम्

से धन लेकर अपना योग क्षेम करे तो उसे सिद्धि होती है अन्यथा नहीं
होती इस प्रकार कीलक से महादेव ने कील दिया है ॥७॥८॥ जो मनुष्य
उत्कीलन करके दुर्गासप्तसती का पाठ करता है सो सिद्ध और गणों के

१ अनेन कीलकस्याङ्गत्वं सूचितम् । नित्यंसर्वदा सर्वकालम् ।

साथ गन्धर्वरूप हो जाता है ॥ ९ ॥ और उस पुरुष को विचरते हुये कहीं भय नहीं होता, अपमृत्यु नहीं होता, मरने पर मोक्ष पाता है ॥१०॥ इन

ससिद्धः सगणः सोऽपि गन्धर्वो जायतेनरः।९।
न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह जायते।
नापमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात्॥
ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत ह्यकुर्वाणो विनश्यति।
ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नामिदं प्रारभ्यते बुधैः॥११॥

सब बातों को जान कर आरम्भ करै, जो ऐसा नहीं करता है सो नष्ट हो जाता है इसी लिये बुद्धिमानों को चाहिये कि सम्यक् प्रकार से जान कर

आरम्भ करे ॥११॥ स्त्री जनों में जो कुछ सौभाग्यादि दृष्टि पड़ते हैं सो सब देवी के प्रसाद से है अतएव यह कीलक स्तोत्र पढ़ना चाहिये ॥ १२॥ जो

सौभाग्यादि च यत्किंचिद्दृश्यते ललनाजने।
तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् १२
शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन्स्तोत्रे संपत्तिरुच्चकैः
भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत्॥१३॥
ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः।

मनुष्य तुम्हारे पाठ को शनैः शनैः (धीरे धीरे) पढ़ता है उसे सम्पत्ति मिलती है। जो कोई जोर से पढ़ता है उसे सब सम्पत्ति मिलती है इस लिये उसको आरम्भ से करना चाहिये ॥१३॥ जिस भगवती के प्रसाद से

शत्रुहानिःपरो मोक्षःस्तूयते सा न किञ्जनैः ॥

इति भगवत्याः कीलकस्तोत्रं समाप्तम् ॥ ३ ॥

ऐश्वर्य, सौभाग्य, आरोग्यता, सम्पत्ति, शत्रुहानि और मोक्ष मिलता है सो मनुष्यों से क्यों न स्तुति की जाय अर्थात् उस भगवती की स्तुति मनुष्यों को अवश्य करना चाहिये ॥ १४ ॥

श्रीगणपतिर्जयति ॥ ॐ अस्यश्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा-ऋषयः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासर-स्वत्यो देवताः ऐं वीजम् ह्रीं शक्तिः क्लीं कीलकम् श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋ-षिभ्यो नमः शिरसि । गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमो मुखे । महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वतीदेवताभ्यो नमो हृदि । ऐं वीजाय

---

१ श्लोकाश्चतुर्दशैवात्र कीलके संप्रतिष्ठिताः ।

नमः गुह्ये । ह्रीं शक्तये नमः पादयोः । क्लीं कीलकाय नमः नाभौ । इति मूलेन करौ संशोध्य । ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यांनमः । ॐ ह्रीं तर्जनी-भ्यांनमः । ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यांनमः । ॐ विच्चे कनिष्ठिका-भ्यांनमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायैविच्चेकरतलकरपृष्ठाभ्यांनमः । एवंहृदयादि । ततोऽक्षरन्यासः ऐं नमः शिखायाम् । ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे । ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे ॐ चांनमः दक्षिणकर्णे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः दक्षिणनासायाम् । ॐ यैं नमः वाम नासायाम् । ॐ विं नमः मुखे । ॐ च्चें नमः गुह्ये । एवं विन्यस्याष्टवारंमूलेन व्यापकं कुर्यात् । ॐ ऐं प्राच्यैनमः । ॐ ऐं आग्नेय्यैनमः । ॐ ह्रीं दक्षिणायैनमः । ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यैनमः । ॐ क्लीं प्रतीच्यैनमः । ॐ क्लीं वायव्यैनमः । ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः । ॐ विच्चेईशान्यैनमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे

ऊर्ध्वायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यैनमः ।
अथध्यानम् ॥ खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शंखं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् ॥ नीलाश्म द्युतिमास्य-
पाददशकां सेवे महाकालिकां यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुम्मधुं
कैटभम् ॥ १ ॥ अक्षस्रक्परशुङ्गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां दण्डं
शक्तिमसिञ्च चर्म्मजलजंघण्टां सुराभाजनम् ॥ शूलम्पाशसुदर्शने च
दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोज-
स्थिताम् ॥ २ ॥ घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रन्धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशु तुल्यप्रभाम् ॥ गौरीदेहसमुद्भवां
त्रिनयनामाधारभूतां महापूर्वामत्रसरस्वती मनुभजेशुम्भादिदैत्यार्दिनीम् । ३ ।

—❀❀—

न० ३६

अथ नवार्ण मन्त्रोद्धारः ।

ऐं वीजमादीन्दुसमानदीप्तिं ह्रीं सूर्य तेजोद्युतिमद् द्वितीयम् ।
क्लीं चापिवैश्वानर तुल्यरूपं तृतीयमानन्त्य सुखाय चिन्त्यम् ।
चाशुद्ध जाम्बू नद कान्ति तुल्यं मुं पञ्चमं वेदतरं प्रकल्प्यम् ।
डां षष्ठमुग्रार्तिं हरं सुनीलं यै सप्तमं कृष्णतरं रिपुघ्नम् ॥
विंपाराडुरं चह्याणिमादि सिद्धंचेधूम्रवर्णं नवमं विशालम् ।

ततः मालां संपूज्य प्रार्थयेत् ।

माले माले महामाये सर्वशक्ति स्वरूपिणी ।
चतुर्वर्गस्त्वयिन्यस्तस्तस्मान्मांसिद्धिदाभव ॥

इति मालां संप्रार्थ्य ॥ ॐ सिद्ध्यैनमः इतिमालां नत्वा (ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुराडायै विच्चे) इति मंत्रं अष्टोत्तर शतं १०८ सहस्रं १००० अयुतं १०००० यथाशक्तिवा जपेत् ।

अथ रात्रिसूक्तम् ।

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥ १ ॥

ब्रह्मोवाच ।

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारःस्वरात्मिका ।
सुधात्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥ २ ॥
अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ।
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥ ३ ॥
त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ।

रा०
४०

त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥ ४ ॥
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ।
तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥ ५ ॥
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ।
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ॥ ६ ॥
प्रकृतिस्त्वञ्च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ।
कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥ ७ ॥
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ।
लज्जा पुष्टिस्तथातुष्टिस्त्वं शांतिःक्षांतिरेवच ॥ ८ ॥
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।

शंखिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा ॥ ९ ॥
सौम्यासौम्यतरा शेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ।
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥ १० ॥
यच्च किंचित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ।
तस्य सर्वस्य या शक्तिःसात्वं किंस्तूयसे तदा ॥ ११ ॥
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ।
सोऽपि निद्रावशंनीतःकःस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ १२ ॥
विष्णुः शरीरग्रहण महमीशान एव च ।
कारितास्ते यतोऽत स्त्वां कःस्तोतुं शक्तिमान्भवेत् १३
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ।

मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ॥ १४ ॥
प्रबोधञ्च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥ १५ ॥

❀ इति रात्रिसूक्तम् ❀

प्रातः सायं यदा कदा प्रति दिनं वा यजमानः आचम्य प्राणानायम्य आनो भद्रादि मङ्गलमन्त्रपठनानन्तरङ्कुशाक्षतादिभिः सङ्कल्पङ्कुर्यात् ।

अद्येत्यादि देश कालौ सङ्कीर्त्य समस्तापन्निवारण पूर्वक मङ्गलप्राप्त्यर्थं गोत्रस्य नाम्नः सर्व मनोरथ सिद्धये महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती प्रीत्यर्थं ङ्कवचार्गलाकीलक न्यासपूर्वकाष्टोत्तर शतनवार्णमन्त्रजपं रात्रि-सूक्तं मार्कण्डेय उवाच इत्यारभ्य सावर्णिर्भवितामनु रिस्यन्त न्तदन्ते देवीसूक्तम्पुनर्नवार्णाष्टोत्तरशतजपं रहस्यत्रययुत न्दुर्गासप्तशतीपाठमहङ्क-रिष्ये । शतचण्डी सहस्रचण्डी पाठं वा । तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृका पूजनं वसोर्धारापूजन मायुष्यमन्त्रजप न्नान्दीश्राद्धमाचार्यवरणा-

दीनि करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नता सिध्यर्थं गणेशांबिकयोः पूजनङ्करिष्ये। अस्मन्मूलशांतिविधिनैतानि सर्वाणि कृत्वा नुष्ठानमारभेत्। प्रथमे दिने अयङ्क्रमः। ततः प्रतिदिनं संक्षेपतोयथाशक्तिपूजितानान्देवानां देवीनाञ्च पूजा कर्तव्या। वृतानाम्ब्राह्मणानाञ्च पूजावश्यकी। शक्तौ सत्याङ्कुमारी पूजनं स्त्रीणाम्पूजनञ्च। समय विषये तु न विशेष नियमः। तदुक्तम्।

मार्कण्डेयपुराणोक्तन्देवी सप्तशतीस्तवम्॥
सर्वकामोह्यकामोवा भक्त्याकुर्यादहर्निशम्॥
सदामन्त्रजपंकुर्याद्धोमंकुर्याद्विधानतः॥
तर्पणम्मार्जनन्देव्याः सद्विप्राणां च भोजनम्॥

इति डामरतंत्रे यामले वाराहीतंत्रे च।

अथ सप्तशती न्यासः। अथ प्रथममध्यमोत्तमचारित्राणां ब्रह्म-विष्णुरुद्राऋषयः श्री महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वत्यो देवताः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि नन्दाशाकम्भरी भीमाः शक्तयः रक्तदन्तिका दुर्गाभ्रामर्य्योबीजानि अग्निवायुस्सूर्य्यस्तत्वानि ऋग्यजुस्सामवेदाध्यानानि

मम सकलकामनासिद्धये श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वतीदेवी प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥ तत्रादौ न्यासः ॥ ॐ खड्गिनीशूलिनी घोरा० अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ शूलेनपाहिनो देवि० तर्जनीभ्यांनमः ॥ ॐ प्राच्यांरक्षप्रतीच्यांच० मध्यमाभ्यांनमः ॥ ॐ सौम्यानियानि रूपाणि० अनामिकाभ्यांनमः । ॐ खड्गशूलगदादीनि० कनिष्ठिकाभ्यांनमः ॥ ॐ सर्व्वस्वरूपेसर्व्वेशे० करतलकरपृष्ठाभ्यांनमः । एवं हृदयादिन्यासः ॥ ॐ खड्गिनीशूलिनी घोरा० हृदयायनमः । ॐ शूलेनपाहिनोदेवि०शिरसे स्वाहा ॥ ॐ प्राच्यां रक्षप्रतीच्यां च०शिखायै वषट् ॥ ॐ सौम्यानियानि रूपाणि० कवचाय हुँ । ॐ खड्गशूलगदादीनि० नेत्रत्रयायवौषट् ॥ ॐ सर्व्वस्वरूपेसर्व्वेशे० अस्त्रायफट् ।

—❀❀❀—

अथ ध्यानम् ।

विद्युद्दाम समप्रभां मृगपतिस्कन्ध स्थितां भीषणां ।
कन्याभिः करवाल खेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।।
हस्तैश्चक्रधरालि खेट विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं ।
विभ्राणामनलात्मिकांशाशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।। १ ।।

पाठ करने के समय "अस्य श्री" से लेकर "विनियोग" तक पढ़कर जल छोड़ना चाहिये, तब आगे ध्यान करना चाहिये) यह अर्थ खड्ग चक्र का है । खड्ग, चक्र, गदा, बाण, चाप, परिघ, शूल, भुशुण्डी, शिर और शंख को धारण किये तीन नेत्रों और सब अंगों के भूषणों से शोभायमान नीलमणि की कान्ति वाली दशों मुख और दशों चरणों से शोभित तथा जब विष्णु भगवान योगनिद्रा में सो रहे थे तब ब्रह्माजी ने जिनकी स्तुति की थी ऐसी महाकाली का भजन करता हूँ ।।

अथ प्रथमोऽध्यायः ।

प्रथमचरित्रस्य ब्रह्माऋषिः महाकाली देवता गायत्रीछंदः नंदाशैक्तिः ऐं रक्तदंतिकाबीजं अग्निस्तत्त्वं ऋग्वेदस्वरूपं श्रीमहाकालीप्रीत्यर्थे प्रथमचरित्रजपे विनियोगः ॥

खड्गंचक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलम्भुशुण्डीं शिरः शंखं संदधतींकरैस्त्रिनयनां सर्व्वांगभूषावृताम् । यां हन्तुं मधुकैटभौ जलजभूस्तुष्टाव सुप्ते हरौ नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकाम् ॥ इति ध्यानम् ॥

ॐ नमश्चण्डिकायै ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥१॥

सावर्णिस्सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः ।

प्रथम चरित्र के ब्रह्मा ऋषि, महाकाली देवता, गायत्री छन्द, नन्दा शक्ति, रक्तदन्तिका बीज, अग्नितत्त्व और ऋग्वेद मूर्ति महाकाली के

प्रीत्यर्थ इसका विनियोग है । जैमिनि मुनि व्यासजी के यहाँ सम्पूर्ण धर्मादिक व्यवस्था का परिज्ञान करके सकल वेदान्त पारंगत महर्षि मार्कण्डेयजी से जगज्जननी चण्डिका की उत्पत्ति को पूछा । मार्कण्डेय ऋषि बोले ॥ १ ॥ सूर्य के पुत्र सावर्णि जिसको आठवाँ मनु कहते हैं उनकी

निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद्गदतो मम ॥ २ ॥
महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः ।
स बभूव महाभागस्सावर्णिस्तनयो रवेः ॥ ३ ॥
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः ।

उत्पत्ति हमसे सुनिये, मैं विस्तार पूर्वक कहता हूँ ॥ २ ॥ महामाया की दया से वह सूर्य्य का पुत्र सब ऐश्वर्यों से परिपूर्ण सावर्णि जिस प्रकार से मन्वन्तर का मालिक हो गया सो सुनो ॥ ३ ॥ स्वारोचिष नाम दूसरे

मनु के राजत्वकाल में कथा से पूर्व चैत्र के वंश में उत्पन्न सुरथ नाम का पृथ्वीमण्डल भर का राजा हुआ ॥ ४ ॥ जब सुरथ अपनी प्रजाओं की नीति पूर्वक अपने लड़कों के समान पालन करने लगा तो उस समय

सुरथो नाम राजाभूत्समस्ते क्षितिमण्डले ।४।

तस्य पालयतः सम्यक्प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ।

वभूवुः शत्रवो भूपाः कोलाविध्वंसिनस्तदा ५

तस्य तैरभवद्युद्धमति प्रवलदण्डिनः ।

न्यूनैरपि सतैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ।६।

कोला बिध्वंस नामके राजा लोग उसके शत्रु होगये ॥ ५ ॥ अधिक प्रबल दण्ड देने वाले सुरथ के साथ उनका युद्ध हुआ यद्यपि कोलाविध्वंसी थोड़े

थे तथापि सुरथ को उन लोगों ने जीत लिया ॥ ६ ॥ महाभाग सुरथ राजा शत्रुओं से दबकर अपने देश में आ कर राज्य करने लगा ॥ ७ ॥ तब उस पुर में भी उसके बलवान तथा दुष्ट मन्त्रियों ने उस दुर्बल राजा

ततस्स्वपुरमायातो निजदेशाधिपोऽभवत् ।
आक्रान्तस्समहाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः
अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः ।
कोशोबलञ्चापहृतंतत्रापि स्वपुरे ततः ॥८॥
ततोमृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यस्सभूपतिः ।

का खजाना और सब सेना छीन लिया ॥ ८ ॥ वह राजा अपना सब राज्य हारकर शिकार खेलने के बहाने से अकेले घोड़े पर सवार घोर बन

में चला गया ॥ ९ ॥ हिंसा न करने वाले पशुओं से भरा हुआ मुनि तथा उनके शिष्यों से सुशोभित मेधा नामक महर्षि का आश्रम

एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥९॥

स तत्राश्रममद्राक्षीद्द्विजवर्यस्य मेधसः ।

प्रशान्तश्वापदाकीर्णमुनिशिष्योपशोभितम्

तस्थौ कञ्चित्सकालञ्च मुनिना तेनसत्कृतः ।

इतश्चेतश्च विचरंस्तास्मिन्मुनिवराश्रमे॥११॥

उसने देखा ॥ १० ॥ मुनि ने उनका बड़ा सत्कार किया और वह राजा इधर उधर बिचरता मुनिवर के आश्रम में थोड़े काल तक रहा ॥ ११ ॥

जब वहाँ भी ममता ने उसके चित्त को घुमाया तो सोचने लगा कि जिस नगर का मेरे पुरखों ने पालन किया था सो मुझसे रहित हो रहा है ॥ १२ ॥ मेरे दुराचारी सेवक उसकी धर्म्म से रक्षा करते होंगे वा

सोऽचिंतयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः ।
मत्पूर्वैःपालितम्पूर्वम्मया हीनम्पुरं हितत् १२
मद्भृत्यैस्तैरसद् वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा ।
न जाने स प्रधानो मे शूरहस्ती सदामदः ।१३।
मम वैरिवशंयातः कान्भोगानुपलप्स्यते ।

नहीं यह मैं नहीं जानता और मन्त्री से युक्त मेरे सदा मतवाले शूर हाथी ॥ १३ ॥ मेरे वैरी के वश में पड़ने के कारण किन किन भोगों को

भोगते होगें। जो प्रति दिन प्रसाद, धन और भोजनों को करके मेरे आज्ञा में रहते थे ॥ १४ ॥ वे अब अन्य राजाओं की सेवा अवश्य करते होंगे

ये ममानुगता नित्यं प्रसादधनभोजनैः ॥ १४ ॥
अनुवृत्तिं ध्रुवन्तेऽद्य कुर्व्वन्त्यन्यमहीभृताम्
असम्यग्व्ययशीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ॥
सञ्चितः सोऽतिदुःखेन क्षयङ्कोशो गमिष्यति।
एतच्चान्यच्च सततञ्चिन्तयामास पार्थिवः १६

और अयोग्य रीति से खर्च करने वाले सदा खर्च करते हुए उन नौकरों से ॥ १५ ॥ बहुत कष्ट से संचित खजाना खर्च हो जायगा इस प्रकार वह सर्वदा चिन्ता करने लगा ॥ १६ ॥ वहाँ उस राजा ने मुनि के आश्रम

के पास एक वैश्य को देखा और उससे पूछा कि तुम कौन हो और यहाँ किस लिये आये हो ॥ १७ ॥ तुम शोकाकुल के समान उदास मालूम

तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः ।
स पृष्टस्तेन कस्त्त्वम् भो हेतुश्चागमनेऽत्रकः ॥
सशोक इव कस्मात्त्वन्दुर्मना इव लच्यसे ।
इत्याकर्ण्यवचस्तस्यभूपतेःप्रणयोदितम् १८
प्रत्युवाच सतं वैश्यःप्रश्रयावनतो नृपम्॥ १९॥

पड़ते हो इसका क्या कारण है वह विनय पूर्वक मुझसे कहो ! राजा की बात को सुन ॥ १८ ॥ वैश्य ने राजा को नम्रता पूर्वक उत्तर दिया ॥१९॥

वैश्य बोला ॥ २० ॥ "समाधि" नामका मैं वैश्य हूँ और धनियों के कुल में उत्पन्न हुआ हूँ ॥ २१ ॥ धन के लोभ से मेरे असज्जन स्त्री पुत्रों ने सब

वैश्यउवाच ॥ २० ॥

समाधिर्नामवैश्योऽहमुत्पन्नोधनिनांकुले ॥
पुत्रदारै र्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः ।
विहीनश्चधनैर्दारैः पुत्रैरादायमेधनम् ॥२२॥
वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्तबन्धुभिः ।

धन छीन कर मुझे घर से निकाल दिया है । और स्त्री पुत्र तथा धन से रहित ॥ २२ ॥ मुझको मेरे मित्र तथा भाई बन्धुओं ने भी छोड़ दिया है अतएव मैं इस बन में आया हूँ और अपने पुत्र तथा आत्मीय लोगों के

कुशलाकुशल की बात नहीं जानता हूँ ॥ २३ ॥ कि मेरे स्त्री पुत्र आदि के घर में सम्प्रति कुशल है वा कोई पीड़ा है ॥ २४ ॥ और मेरे पुत्रों का

सोहन्नवेद्मिपुत्राणाङ्कुशलाकुशलात्मिकाम्
प्रवृत्तिं स्वजनानाञ्च दाराणाञ्चात्र संस्थितः।
किन्नुतेषाङ्गृहे क्षेममक्षेमाङ्किन्नुसाम्प्रतम्।
कथन्ते किन्नु सद्वृत्ता दुर्वृत्ताःकिन्नुमेसुताः।

राजोवाच ॥ २६ ॥

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैःपुत्रदारादिभिर्धनैः ॥

आचरण अब भला है या बुरा है ॥ २५ ॥ राजा बोले ॥ २६ ॥ कि जिन

लोभी पुत्र, स्त्री, आदिकों ने धन के लोभ से तुम्हें निकाल दिया ॥२७॥ अब तुम्हारे चित्त में उनके लिये क्यों स्नेह है ॥ २८ ॥ वैश्य बोला ॥२९॥

तेषुकिम्भवतःस्नेहमनुवध्नातिमानसम् २८

वैश्य उवाच ॥ २९ ॥

एवमेतद्यथाप्राह भवानस्मद्गतं वचः॥३०॥
किङ्करोमि न वध्नाति मम निष्ठुरताम्मनः।
यैःसन्त्यज्य पितृस्नेहन्धनलुब्धैर्निराकृतः ॥

जैसा आप कहते हैं वैसा ही मेरे मन में भी है ॥ ३० ॥ पर क्या करूँ मेरे चित्त में ऐसी निठुरता नहीं होती, जिन लोगों ने पिता, पति और मित्र के स्नेह को छोड़ कर मुझे धन के लोभ से निकाल दिया है ॥३१॥

उन्हीं में मेरा मन फँस रहा है। हे महामते! यह जान कर भी मेरा चित्त उन अवगुणी बन्धुओं से प्रेम करता है मैं नहीं समझता कि क्या

पतिस्वजनहार्दञ्च हार्दितेष्वेव मे मनः।
किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते॥
यत्प्रेमप्रवणञ्चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु।
तेषां कृते मे निःश्वासो दौर्मनस्यञ्च जायते॥
करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम्॥

बात है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ परन्तु क्या करूँ उन निर्मोहियों सा मेरा मन कठोर नहीं होता है ॥ ३४ ॥ मार्कण्डेय जी बोले ॥ ३५ ॥ तब ये दोनों

मिलकर मुनि के पास गये ॥ ३६ ॥ और समाधि नामक वैश्य तथा वह श्रेष्ठ राजा बातें कह कर बैठ गये ॥ ३७ ॥ तब राजा और वैश्य कुछ

मार्कण्डेयउवाच ॥ ३५ ॥

ततस्तौ सहितौ विप्र तम्मुनिं समुपास्थितौ ।
समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तमः ॥
कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम् ।
उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्यपार्थिवौ ३८

राजोवाच ॥ ३६ ॥

बातें करने लगे ॥ ३८ ॥ राजा बोले ॥ ३६ ॥ हे भगवन् मुझे कुछ

आपसे पूछना है सो कहिये ॥ ४० ॥ यह कि चित्त की स्वाधीनता के बिना मेरे मनको दुःख है सो यह गये हुये राज में और सब राज्य के

भगवंस्त्वामहम्प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् ।
दुःखाय यन्मे मनसः स्वचित्तायत्ततां विना ।
ममत्वङ्गतराज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि ॥
जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनिसत्तम ।

अङ्ग में ॥ ४१ ॥ अज्ञ के समान जान बूझ कर भी मेरी ममता है और हे मुनिवर ! यह वैश्य भी अपने पुत्र, स्त्री तथा नौकरों से निरादर होकर

निकाल दिया गया है ॥ ४२ ॥ और भाई बन्धुओं ने भी इसे त्याग दिया है तिस पर भी इसका चित्त उसमें लग रहा है। इस प्रकार यह

अयञ्चानिष्कृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः ४२
स्वजनेन च सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति।
एवमेष तथाहञ्च द्वावप्यत्यन्तदुःखितौ ४३
दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वा कृष्टमानसौ।

और मैं दोनों ही अत्यन्त दुखी हूँ ॥ ४३ ॥ जिसमें दोष देख पड़ता है उस विषय में भी ममता ने हम दोनों के मनको डवाडोल कर दिया है

१-(क) यह वर्ण सप्तशती में यही एक है ॥ इति मातृ प्रसादः ॥

सो हे मुनिवर ! यह क्या बात है ज्ञानियों को भी मोह सताता है ॥४४॥
हमारी और इसकी यह मूर्खता अज्ञानियों के सदृश हो रही है ॥ ४५ ॥

तत्किमेतन्महाभागयन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥
ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्यमूढता ।

ऋषिरुवाच ॥ ४६ ॥

ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषयगोचरे ॥
विषयश्च महाभाग याति चैवम्पृथक्पृथक् ।

ऋषि बोले ॥ ४६ ॥ सब जन्तुओं का विषय दृष्टि गोचर होने अर्थात् देख पड़ने पर ज्ञान होता है ॥ ४७ ॥ पर हे राजा ! विषय ज्ञान भिन्न २

प्रकार से होता है। कितने प्राणी तो दिन में अन्धे हैं और कितने रात्रि में ॥ ४८ ॥ कितने को दिन तथा रात में समान देख पड़ता है, मनुष्य

दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्रात्रावन्धास्तथापरे।
केचिद्दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्यदृष्टयः।
ज्ञानिनो मनुजास्सत्यं किन्तु ते नहि केवलम्।
यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपक्षिमृगादयः।
ज्ञानञ्चतन्मनुष्याणांयत्तेषाम्मृगपक्षिणाम्

ज्ञानी है सो तो सत्य है, परन्तु उनको केवल "ज्ञान" नहीं है ॥ ४६ ॥ यों तो पशु पक्षी मृग आदि सभी ज्ञानी हैं परन्तु जो ज्ञान मृग तथा पक्षियों को है वही ज्ञान मनुष्यों को है ॥ ५० ॥ अतिरिक्त इसके आहार

निद्रा आदि मनुष्य और पक्षियों में एक से हैं पक्षियों को देखो कि ज्ञान होने पर भी जब क्षुधातुर होते हैं तो मोह से बच्चों की चोचों में पहिले

मनुष्याणाञ्च यत्तेषान्तुल्यमन्यत्तथोभयोः
ज्ञानेऽपिसतिपश्यैतान्पतङ्गाञ्छावचञ्चुषु॥
कणमोक्षादृतान्मोहात्पीड्यमानानपि क्षुधा
मानुषामनुजव्याघ्रसाभिलाषाःसुतान्प्रति ॥
लोभात्प्रत्युपकाराय नन्वेतान् किन्नपश्यसि।

कण देते हैं। हे राजन्! मनुष्य भी इस प्रकार अपने पुत्रों पर उपकार के लोभ से मोह करते हैं॥ ५१ ॥ ५२ ॥ परन्तु पुत्र उनका कुछ उपकार नहीं करते तुम क्यों नहीं देखते हो! संसार का पालन करने वाली जो

महामाया का प्रभाव है उसने भ्रम युक्त मोह की खाड़ी में गिरा रक्खा है कुछ भी इसमें आश्चर्य करना न चाहिये। जगत्पति विष्णु भगवान्

तथापि ममतावर्त्तें मोहगर्तें निपातिता: ५३

महामाया प्रभावेण संसारस्थितिकारिणा।

तन्नात्र विस्मय:कार्यों योगनिद्रा जगत्पते: ॥

महामाया हरेश्चैषा तयासंमोह्यते जगत्।

ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ॥

की योग निद्रा जो तमोगुण प्रधान शक्ति है ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ भगवान् की महामाया से सब जगत् मोह को प्राप्त है वह भगवती देवी ज्ञानियों के भी चित्तों को ॥ ५५ ॥ बल से खींच कर देवी मोहयुक्त कर देती हैं

और वही सम्पूर्ण जगत् और चराचर को उत्पन्न करती हैं ॥ ५६ ॥ और प्रसन्न होकर मनुष्य को बरदान देती हैं जिससे मुक्ति पाते हैं, वही

वलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ।
तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् ॥ ५६ ॥
सैषा प्रसन्ना वरदा नृणाम्भवति मुक्तये ।
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु भूता सनातनी ५७
संसारवन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥ ५८ ॥

"परमा" अर्थात् ब्रह्मज्ञान रूप सनातनी हेतुरूप है ॥ ५७ ॥ और वही सर्वेश्वरी संसाररूपी बन्धन की कारणरूपा है ॥५८॥ "राजा बोले" ॥५६॥

हे भगवन् आप जिसे महामाया कहते हैं सो कौन सी देवी है ॥ ६० ॥ और हे द्विज ! कैसे उत्पन्न हुई उनका कर्म क्या है ! जिस प्रभाव वाली

राजोवाच ॥ ५९ ॥

भगवन्काहि सा देवी महामायेतियाम्भवान्॥
ब्रवीतिकथमुत्पन्नासाकर्म्मास्याश्चकिन्द्विज
यत्प्रभावा च सा देवी यत्स्वरूपायदुद्भवा ६१
तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्मविदांवर ६२

जिस स्वरूप वाली और जिस प्रकार उत्पन्न हुई हो ॥६१॥ हे ब्रह्म ! देवताओं में श्रेष्ठ ! सो सब मैं आप से सुनना चाहता हूँ ॥ ६२ ॥ "ऋषि

बोले" ॥ ६३ ॥ वह जगत् की आश्रयभूत नित्य है और उसी ने इस जगत् को फैला रक्खा है ॥ ६४ ॥ तो भी तुम हमसे उसकी उत्पत्ति

ऋषिरुवाच ॥ ६३ ॥

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदन्ततम् ॥
तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयताम्मम ।
देवानाङ्कार्य्यसिध्यर्थमाविर्भवति सा यदा ६५
उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते ।

बहुत प्रकार से सुनो ! देवताओं के कार्यों को सिद्ध करने के लिये जब वह प्रकट होती है ॥ ६५ ॥ तब वह संसार में उत्पन्न हुई और "नित्य"

कही जाती है ॥ ६६ ॥ कल्पान्त में जब जगत् जल मय होगया और श्री विष्णु भगवान् शेषशय्या पर शयन करने लगे तब बड़े बड़े दो असुर

योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते ६६
आस्तीर्य्यशेषमभजत्कल्पान्तेभगवान्प्रभुः
तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधुकैटभौ ६७
विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुम्ब्रह्माणमुद्यतौ ।
स नाभिकमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः

जिनका नाम "मधु" और "कैटभ" था ॥ ६७ ॥ श्री विष्णु भगवान के कान के मैल से उत्पन्न हुए और श्री ब्रह्माजी को मारने के लिये तैयार हुए तब श्रीविष्णु भगवान् के नाभि कमल में स्थित प्रजापति ब्रह्माजी ॥६८॥

उन दोनों असुरों को देख और भगवान् को सोता हुआ देखकर एकाग्र चित्त बैठ श्रीविष्णु भगवान् को जगाने के लिये भगवान् के नेत्रों में प्राप्त

दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तञ्च जनार्दनम् ।
तुष्टाव योगनिद्रान्तामेकाग्रहृदयःस्थितः ६९
विबोधनार्थाय हरे र्हरिनेत्र कृतालयाम् ।
विश्वेश्वरीञ्जगद्धात्रींस्थितिसंहारकारिणीम् ।
निद्राम्भगवतीं विष्णोरतुलान्तेजसःप्रभुः ७१

योग निद्रा विश्वेश्वरी जगत् को रचने वाली तथा जगज्जननी पालन तथा नाश करने वाली विष्णु भगवान् के तेज की अतुल मूर्ति ऐसी निद्रा भगवती की स्तुति करने लगे ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ब्रह्मा बोले ॥ ७२ ॥

तुम स्वाहा (हवन में स्वाहा मन्त्र रूप) हो श्राद्धादि में स्वधा रूप हो, यज्ञ में देवताओं को बुलाने के लिये मंत्र रूप हो और तुम ही स्वर रूपात्मिका हो ॥ ७३ ॥ तुम अमृतरूप हो, नित्य हो कभी तुम्हारा

ब्रह्मोवाच ॥ ७२ ॥

त्वंस्वाहात्वंस्वधात्वंहिवषट्कारःस्वरात्मिका
सुधात्वमक्षरेनित्येत्रिधामात्रात्मिकास्थिता
अर्द्धमात्रास्थितानित्यायानुच्चार्य्याविशेषतः

नाश नहीं होता ह्रस्व दीर्घ और प्लुत स्वरूप से स्थित हो, व्यञ्जनरूप हो, नित्य अविनाशिनी हो और विशेष कर तुम्हारा, कोई वर्णन नहीं कर सकता ॥ ७४ ॥ तुम ही सन्ध्यारूप हो, तुम ही सावित्री हो,

हे देवी ! तुम ही माता ईश्वरी हो, तुमही विश्व को धारण करती हो और तुम ही उत्पन्न करती हो ॥७५॥ हे देवि ! तुम ही पालन करती हो

त्वमेव सन्ध्यासावित्री त्वन्देवि जननी परा ।
त्वयैतद्धार्य्यते विश्वन्त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥
त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ।
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ॥
तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ।

और तुम ही सर्वदा भक्षण करती हो, इस संसार को रचने के समय सृष्टिरूप और पालन के समय स्थितिरूप हो ॥ ७६ ॥ हे जगन्मये ! जगत् को नाश करने के समय संहार रूप हो तुम ही महाविद्या, महामाया,

महामेधा, और महास्मृति हो ॥ ७७ ॥ महामोहा, महादेवी और महासुरी हो, सबकी प्रकृति रूप तुम ही हो, सत्व, रज और तम इन तीनों गुणों से युक्त हो ॥ ७८ ॥ तुम ही कालरात्री (महा प्रलय रूपी)

महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः॥
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ।
प्रकृतिस्त्वञ्च सर्वस्य गुणत्रय विभाविनी ॥
कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ।

हो महारात्री (प्रलय की रात्री) और मोहरात्री (सृष्टि उत्पन्न करने वाली) हो दारुणा (भीषणा) हो अथवा कालरात्रि (शिवरात्रि) महारात्रि (दीवाली) मोहरात्रि कृष्ण जन्माष्टमी,

कंसादिकों को मोहोत्पन्नकर्त्री तुम्ही को कहते हैं । तुम लक्ष्मी हो, ईश्वरी हो, तुम लज्जा हो और बुद्धि हो तथा ज्ञान की लक्षणा हो ॥७९॥ तुम ही लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति तथा क्षमा हो, तुम ही खड्गिनी

त्वंश्रीस्त्वमीश्वरीत्वंह्रीस्त्वंबुद्धिर्बोधलक्षणा ।
लज्जापुष्टिस्तथातुष्टिस्त्वं शांतिःक्षांतिरेवच ।
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शंखिनीचापिनी वाणभुशुण्डीपरिघायुधा ॥

और त्रिशूल धारण करने वाली हो, भयंकर रूप हो, और तुम ही गदिनी चक्रिणी हो ॥ ८० ॥ तुम ही शंखिनी तथा धनुर्धारिणी हो, तुम ही बाण, भुशुण्डी, तथा परिघ, धारण करने वाली, सौम्य तथा असौम्य-

रूपा हो और सब सुन्दर वस्तुओं से भी सुन्दर हो ॥ ८१ ॥ तुम ही परा रूप हो, उत्तम में प्रधान हो, तुम ही परमेश्वरी हो, हे अखिलात्मिके। जो कुछ सत् और असत् वस्तु है। वह तुम्ही हो ॥ ८२ ॥

सौम्यासौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी।
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी।
यच्चकिञ्चित्क्वचिद्वस्तुसद्सद्वाखिलात्मिके।
तस्यसर्व्वस्य या शक्तिःसा त्वाङ्किंस्तूयसे तदा।
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्तियो जगत्

उन सबों की जो शक्ति है वह तुम्ही हो तो तुम्हारी कैसे स्तुति की जा सकती है। तुमने भगवान् को भी (जो जगत् को उत्पन्न,

पालन और नाश करने वाले हैं) ॥ ८३ ॥ निद्रावश कर दिया तो अब तुम्हारी स्तुति करने योग्य कौन है । विष्णु भगवान् को, मुझे और महादेवजी को शरीर धारण करा दिया ॥ ८४ ॥ अतएव अब किसकी

सोऽपि निद्रावशन्नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एवच॥८४॥
कारितास्तेयतोतस्त्वाङ्कःस्तोतुंशक्तिमान् भवेत्
सात्वमित्थम्प्रभावैःस्वैरुदारैर्देविसंस्तुता८५
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ।

शक्ति है जो तुम्हारी स्तुति करे तुम्हारे बड़े प्रभाव (महात्म्य) हैं उनसे इस तरह स्तुति की गई हो ॥ ८५ ॥ अब तुम मधु और कैटभ इन दोनों

दुराधर्ष असुरों को मोह उत्पन्न करो और जगत् के नाथ श्रीविष्णु भग-
वान को शीघ्र ही जगाओ ॥ ८६ ॥ और इन बड़े असुरों को मारने के
लिये ज्ञान कराओ ॥ ८७ ॥ "ऋषि बोले" ॥ ८८ ॥ जब ब्रह्माजी ने

प्रबोधञ्च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ८६
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ८७

ऋषिरुवाच ॥ ८८ ॥

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा ८६
विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधुकैटभौ ।

योगनिद्रा रूप देवी जी की इस प्रकार स्तुति की ॥ ८६ ॥ तब श्री विष्णु
भगवान् को जगाने तथा मधु और कैटभ को मारने के लिये

भगवान् के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय और छाती से ॥६०॥ निकल कर श्रीब्रह्माजी को दर्शन देने के लिये स्थित हुई और संसार के स्वामी

नेत्रास्यनासिकाबाहुहृदयेभ्यस्तथोरसः ६०
निर्गम्य दर्शनेतस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः।
उत्तस्थौच जगन्नाथस्तयामुक्तो जनार्दनः६१
एकार्णवेऽहिशयनात्ततस्स ददृशे च तौ।
मधुकैटभौदुरात्मानावतिवीर्य्यपराक्रमौ६२

श्रीविष्णु भगवान् को जगा दिया ॥ ६१ ॥ श्रीविष्णु भगवान् शेष शय्या से उठकर बड़े पराक्रम वाले मधु कैटभ नामक दुष्टों को देखा ॥ ६२ ॥

क्रोध से लाल २ नेत्र किये ब्रह्माजी को भक्षण करने के यत्न में लगे उन दुष्टों को देख श्रीविष्णु भगवान् उठकर उनके साथ युद्ध करने लगे ॥६३॥

क्रोधरक्तेक्षणावत्तु म्ब्रह्माणञ्जनितोद्यमौ ।
समुत्थाय ततस्ताभ्यांयुयुधेभगवान्हरिः६३
पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो विभुः ।
तावप्यातिबलोन्मत्तौमहामायाविमोहितौ ॥
उक्तवन्तौवरोऽस्मत्तोव्रियतामितिकेशवम् ॥

पाँच हजार वर्ष तक श्रीविष्णु भगवान् ने बाहु युद्ध किया अन्त में बल से उन्मत्त उन दोनों को महामाया ने मोहयुक्त कर दिया ॥ ६४ ॥ तब वे

भगवान् से बोले कि तुम हमसे बर माँगो ॥ ९५ ॥ भगवान् बोले ॥९६॥ यदि तुम लोग हम पर प्रसन्न हो तो तुम दोनों मुझसे ही मारे जाओ॥९७॥

भगवानुवाच ॥ ९६ ॥

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावुभावपि ९७
किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतम्मम ९८

ऋषिरुवाच ॥ ९९ ॥

वञ्चिताभ्यामितितदा सर्वमापोमयञ्जगत्।

इसके सिवाय और क्या माँगू इतना ही माँगता हूँ ॥ ९८ ॥ ऋषि बोले ॥ ९९ ॥ इस प्रकार जब वे बचनबद्ध हो गये तब सब जगत् जल-

१ मया इत्यपिपाठः ।

मय देख ॥ १०० ॥ उन दोनों ने कमलनेत्र भगवान् से कहा कि जहाँ पृथ्वी जल से भरी न हो वहाँ मारिये ॥ १०१ ॥ ऋषि बोले ॥ १०२ ॥

विलोक्यताभ्यां गदितो भगवान्कमलेक्षणः
आवाञ्जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता ।

ऋषिरुवाच ॥ १०२ ॥

तथेत्युक्त्वा भगवता शंखचक्रगदाभृता ।
कृत्वा चक्रेण वैच्छिन्ने जघने शिरसी तयोः ॥

शंख, चक्र, गदा को लिये श्रीविष्णु भगवान् "अच्छा" कह अपने पेढ़ू पर उन दोनों का शिर चक्र से काट दिया ॥ १०३ ॥ ब्रह्मा से इस

एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम्।
प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते ॥

प्रकार स्तुति की गई यह देवी स्वयं उत्पन्न हुई हैं इनका माहात्म्य और सुनो मैं कहता हूँ ॥ १०४ ॥

इति मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये मधुकैटभवधो नाम
प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ उवाच १४ । अर्धश्लोकाः २४ ।
श्लोकाः ६६ । आदितो मंत्राः १०४ ।

सम्पुटविषये डामरतन्त्रे । मार्कण्डेयपुराणोक्तं सदाचण्डीस्तवम्पठन् ॥ पुटितम्मूलमन्त्रेण जपेनाप्नोतिवाञ्छितम् ॥ १ ॥ मरीचिकल्पे । एवन्देवि-मयाप्रोक्तः पौरश्चरणिकः क्रमः ॥ तदन्तेहवनङ्कुर्यात्प्रतिश्लोकेन पायसम् ॥ रात्रिसूक्तम्प्रतिऋचं तथा देव्याश्चसूक्तकम् ॥ तदन्ते प्रजपेत्स्तोत्रमादौ

पूजादिकम्मुने ॥ इति पूर्वोक्तैर्वचनैरिदमायातिशत्कवचार्गला कीलकमन्त्रैः रहस्यत्रयमन्त्रैश्च हवनन्नकर्तव्यम् । देवीसूक्तविषयेतु । नमोदेव्यादिकंसूक्तं सर्वकालफलप्रदम् ॥ अतः पाठो होमश्च सर्वदाकर्तव्यः । योगनिद्रात्मक रात्रिदैवत्यस्त्वाद्रात्रौ पाठोहोमश्च महत्फलदः । कवचार्गला कीलकानां पाठमात्रङ्कृत्वा नवार्णमन्त्रेणाष्टोत्तर शतंहुत्वा रात्रिसूक्तम्प्रतिमन्त्रंहुत्वा सप्तशत्याः प्रतिमन्त्रंहुत्वा देवीसूक्तम्प्रतिमन्त्रं नवार्णाष्टोत्तरशतञ्चहुत्वा रहस्यत्रयम्पठेत् । सम्पुटविषये । ॐ ह्लीं स्वाहा । मार्कण्डेयउवाच स्वाहा । ॐ ह्लीं स्वाहा । एवं सर्वत्रमन्त्रेषु । त्रयोदशसुअध्यायेष्वध्यायान्ते । ॐ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिकेनमानयतिकश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् । स्वाहा । इति मंत्रेण ताम्बूलपूगीफल शष्कुलीघृतैर्होमः । पश्चात्केवलेन घृतेनतिस्रआहुतयः । ॐ अम्बायै स्वाहा । ॐ अम्बिकायै स्वाहा । ॐ अम्बालिकायै स्वाहा ।

—❀❀❀—

द्वितीयोऽध्यायः ।

ॐ अस्य श्रीमध्यमचरित्रस्य विष्णुर्ऋषिः महालक्ष्मीर्देवता उष्णिक्छन्दः शाकम्भरीशक्तिः ह्रीं दुर्गाबीजं वायुस्तत्त्वं यजुर्वेदः स्वरूपं महालक्ष्मीप्रीत्यर्थे मध्यमचरित्रजपे विनियोगः ॥ २ ॥

मध्यम चरित्र के विष्णु ऋषि, महालक्ष्मी देवता, उष्णिक्छन्द, शाकम्भरी शक्ति, दुर्गाबीज वायुतत्त्व, और यजुर्वेद मूर्ति है, महालक्ष्मी के प्रीत्यर्थ इसका विनियोग है " ॐ अस्य श्री इत्यादि "

से लेकर " विनियोग " तक पढ़के जल छोड़ना चाहिये और तब ध्यान करना चाहिये कि रुद्राक्ष की माला पहिरे परशु, गदा, बाण, वज्र पद्म, धनुष, कमण्डलु, दण्ड, बरछी, तलवार, ढाल, कमल, घण्टा, सुरापात्र, शूल, त्रिशूल, फाँसी, सुदर्शन चक्र, हाथों में लिये प्रसन्नमुखवाली महिषासुर मर्दिनी

अथ ध्यानम् ।

अक्षस्रक्परशुं गदेषु कुलिशम्पद्मं धनुः कुण्डिकां ।
दण्डं शक्तिमसिञ्च चर्मजलजं घण्टांसुराभाजनम् ॥
शूलम्पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां ।
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥२॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

देवासुर मभूद्युद्धम्पूर्णमब्द शतम्पुरा ।
महिषेऽसुराणामधिपे देवानाञ्च पुरन्दरे २

कमल पर बैठी ऐसी महालक्ष्मी की मैं सेवा करता हूँ ॥१॥ ऋषि बोले ॥१॥ पहले कल्प में देवता और राक्षसों से सौ वर्ष युद्ध हुआ उस समय राक्षसों का स्वामी महिषासुर और देवताओं के स्वामी इन्द्र थे ॥२॥ उस

युद्ध में बलवान असुरों ने देवताओं की सेना को हरा दिया और महिषासुर सब देवताओं को जीत कर आप इन्द्र बन गया ॥ ३ ॥ तब हारे हुए देवतागण श्रीब्रह्माजी को आगे करके जहाँ श्रीविष्णु भगवान् और

तत्रासुरै र्महावीर्य्यै र्देवसैन्यं पराजितम् ।
जित्वाचसकलान्देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः
ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिम्प्रजापतिम् ।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेश गरुडध्वजौ ४
यथावृत्तन्तयो स्तद्वन्महिषासुर चेष्टितम् ।

शिवजी थे वहाँ पर गये ॥ ४ ॥ शिवजी और विष्णु भगवान् के सामने देवताओं ने जिस प्रकार महिषासुर से देवताओं की हार हुई थी सो

सब विस्तार पूर्वक कहा ॥ ५ ॥ महिषासुर ने सूर्य, इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, यम, वरुण, और अन्यान्य देवताओं के अधिकारों को स्ववश कर

त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम् ५

सूर्य्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च ।
अन्येषां चाधिकारान्सस्वयमेवाधितिष्ठति ६

स्वर्गान्निराकृतास्सर्वे तेन देवगणा भुवि ।
विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेणदुरात्मना ७

लिया है ॥ ६ ॥ दुष्ट महिषासुर ने सब देवताओं को स्वर्ग से निकाल दिया है इससे सब देवता मनुष्यों के सदृश भूमि पर घूमते हैं ॥ ७ ॥

जो कुछ उस असुर ने किया था सब आपसे निवेदन किया। हम आपकी शरण में आये हैं आप उसके मारने का उपाय सोचिये ॥ ८ ॥ देवताओं

एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम्।
शरणंवःप्रपन्नाःस्मोवधस्तस्यविचिन्त्यताम्
इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः।
चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ ६
ततोऽतिकोपपूर्णस्य चक्रिणो वदनात्ततः।

की ऐसी बातें सुन विष्णु भगवान् और शिवजी को अत्यन्त क्रोध हुआ और दोनों ने भ्रुकुटियाँ चढ़ाई ॥ ६ ॥ अत्यन्त क्रोध से परिपूर्ण

भगवान् ब्रह्मा और शिवजी के मुख से बड़ा भारी तेज निकला ॥ १० ॥ और इन्द्रादि अन्य देवताओं के शरीर से भी महातेज निकला और सब

निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणश्शङ्करस्यच १०
अन्येषाञ्चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः।
निर्गतं सुमहत्तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत ११
अतीव तेजसः कूटञ्ज्वलन्तमिव पर्वतम्।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाव्याप्तदिगन्तरम्॥

मिल कर एकत्रित होगया ॥ ११ ॥ वहाँ उन देवताओं ने उस महातेज के पुंज को जिसकी ज्वाला सब दिशाओं में फैल गई थी पर्वत के समान

जलते देखा ॥ १२ ॥ देवताओं के शरीर से उत्पन्न, एकत्रित और अपनी कांति से तीनों लोक में प्रकाश करने वाला वह तेजका पुञ्ज एक स्त्री रूप हो गया ॥ १३ ॥ शिवजी से जो तेज उत्पन्न हुआ था सो उस स्त्री का

अतुलन्तत्र तत्तेजस्सर्वदेवशरीरजम् ।
एकस्थन्तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयन्त्विषा ॥
यदभूच्छाम्भवन्तेजस्तेनाजायत तन्मुखम् ।
याम्येन चाभवन्केशा बाहवो विष्णुतेजसा ॥
सौम्येन स्तनयोर्युग्मम्मध्यंचैन्द्रेण चाभवत् ।

मुख बन गया, यमराज के तेज से बाल बन गया और विष्णु भगवान् के तेज से भुजा बन गई ॥ १४ ॥ चन्द्रमा के तेज से दोनों स्तन हुये, इन्द्र के

तेज से उदर हुआ, वरुण के तेज से जाँघ तथा घुटना और पृथ्वी के तेज से नितम्ब (चूतड़) भाग होगया ॥ १५ ॥ ब्रह्मा के तेज से चरण, सूर्य्य के तेज से पैरों की अँगुली, वसु के तेज से हाथों की अँगुली और कुबेर के

वारुणेनच जङ्घोरूनितम्बस्तेजसाभुवः १५

ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदंगुल्योऽर्कतेजसा ।

वसूनाञ्चकरांगुल्यःकौबेरेण च नासिका १६

तस्यास्तु दन्ताःसम्भूताःप्राजापत्येन तेजसा

नयनात्रितयं जज्ञे तथा पावकतेजसा ॥ १७ ॥

तेज से नाक हुआ ॥ १६ ॥ प्रजापति के तेज से दाँत, अग्नि के तेज से तीनों नेत्र उत्पन्न हुये ॥ १७ ॥ सन्ध्याओं के तेज से भृकुटि और वायु

के तेज से कान होगये और अन्यान्य देवताओं के तेजों के पुञ्ज से शिवा-रूप दुर्गा उत्पन्न हुई ॥ १८ ॥ सब देवताओं के तेज के समूह से उत्पन्न

भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च ।
अन्येषाञ्चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा ॥
ततस्समस्तदेवानान्तेजोराशिसमुद्भवाम् ।
तां विलोक्य मुदम्प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥
शूलं शूलाद्विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक् ।

देवीजी को देख महिषासुर से पीड़ित सब देवता प्रसन्न भये ॥ १९ ॥ शिवजी ने अपने त्रिशूल से निकाल कर उन्हें त्रिशूल दिया, भगवान् नें चक्र

से निकाल चक्र दिया ॥ २० ॥ वरुण ने शंख दिया, अग्नि ने शक्ति दी, और पवन ने धनुष और बाणों से परिपूर्ण तरकस दिया ॥२१॥ देवताओं

चक्रञ्च दत्तवान्कृष्णः समुत्पाद्य स्वचक्रतः ॥
शङ्खञ्च वरुणश्शक्तिन्ददौ तस्यै हुताशनः ।
मारुतो दत्तवांश्चापम्बाणपूर्णे तथेषुधी ॥२१॥
वज्रमिन्द्रस्समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः ।
ददौतस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद्गजात् ॥

के अधिपति इन्द्र ने अपने वज्र से उत्पन्न करके वज्र और ऐरावत हाथी का घण्टा निकाल कर दिया ॥ २२ ॥ यमराज ने दण्ड से निकाल कर

दण्ड दिया, वरुण ने फाँसी निकाल कर दी, दक्षप्रजापति ने रुद्राक्ष की माला दी और ब्रह्मा ने कमण्डलु दिया ॥ २३ ॥ सूर्य्य ने उनके सब रोमों

कालदण्डाद्यमो दण्डम्पाशञ्चाम्बुपतिर्ददौ ।
प्रजापतिश्चाक्षमालान्ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥
समस्तरोमकूपेषु निजरश्मीन्दिवाकरः ।
कालश्चदत्तवान्खड्गं तस्याश्चर्म्मं च निर्मलम् ।
क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे ।

में किरणों को दिया और काल ने सुन्दर ढाल तथा खड्ग दिया ॥ २४ ॥ समुद्र ने मोतियों का हार, उज्ज्वल वस्त्र, सुन्दर चूड़ामणि, कुण्डल

और कंकन ॥ २५ ॥ अर्धचन्द्र, भुजाओं में बाजूबन्द, सुन्दर नूपुर, एक अनुपम कण्ठ का भूषण ॥ २६ ॥ और सब अँगुलियों में अँगूठियाँ और

चूडामणिन्तथा दिव्यङ्कुण्डलेकटकानि च।
अर्द्धचन्द्रन्तथा शुभ्रङ्केयूरान्सर्वबाहुषु ॥
नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ॥ २६ ॥
अङ्गुलीयकरत्नानि समस्तास्वङ्गुलीषु च।
विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुञ्चातिनिर्मलम् ॥
अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथाभेद्यञ्च दंशनम् ।

विश्वकर्मा ने अत्यन्त निर्मल फरसा दिया ॥ २७ ॥ और अनेक प्रकार के

अस्त्र, जो किसी से कट न सके ऐसा कवच दिया। और समुद्र ने तुरत के खिले हुए कमल के फूलों की माला कण्ठ के लिये दी और शिर पर धारणार्थ एक दूसरी माला दी ॥ २८ ॥ और एक अत्यन्त सौन्दर्य युक्त कमल

अम्लानपङ्कजाम्मालां शिरस्युरसि चापराम्।
अददज्जलधिस्तस्यै पङ्कजञ्चातिशोभनम् ।
हिमवान्वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च ॥
ददावशून्यं सुरया पानपात्रन्धनाधिपः ।
शेषश्च सर्व्वनागेशो महामणिविभूषितम् ॥

दिया, हिमवान् ने चढ़ने के निमित्त सिंह और अनेक रत्न दिये ॥ २९ ॥ कुबेर ने मद्य से भरा कटोरा दिया। सब नागों के स्वामी पृथ्वी को शिर

पर धारण करने वाले शेषजी ने रत्नों से विभूषित एक नागहार दिया। और देवताओं ने भी भूषण आयुध से ॥ ३० ॥ ३१ ॥ देवीजी का सम्मान किया फिर देवीजी ने बड़ा घोर शब्द किया और बारम्बार खिलखिला

नागहारन्ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम्।
अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ॥३१॥
सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासम्मुहुर्मुहुः।
तस्या नादेनघोरेण कृत्स्नमापूरितन्नभः॥३२॥
अमायतातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत्।

कर हँसने लगीं (अट्टहास किया) उनके घोर नाद से सम्पूर्ण आकाश-मण्डल भर गया ॥ ३२ ॥ तब आकाश-मण्डल से एक बड़ा भारी प्रति-

शब्द हुआ, जिससे सब लोग डगमगा गये और चारों समुद्र काँप उठे ॥३३॥ पृथ्वी हिलने लगी सब पर्वत अचल विचल हो गये, देवगण प्रसन्नता पूर्वक सिंहवाहिनी भगवती के सन्मुख जय जय शब्द करने लगे ॥ ३४ ॥

चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकंपिरे। ३३
चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च महीधराः ॥
जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम् ॥
तुष्टुवुर्मुनयश्चैनाम्भक्तिनम्रात्ममूर्तयः ।
दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धन्त्रैलोक्यममरारयः ॥

और भक्तिपूर्वक नम्रता से देवीजी को देख स्तुति करने लगे तब असुरों ने सम्पूर्ण जगत् को संचलित देखा ॥३५॥ अपनी अपनी सेना की तैयारी

की और हाथों में अस्त्र शस्त्र ले लिये महिषासुर ने क्रोध से "आः" यह क्या है, कहकर ।। ३६ ।। सब असुरों को साथ ले उस शब्द की ओर

सन्नद्धाखिलसैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः ॥
आःकिमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः।
अभ्यधावत तं शब्दमशेषै रसुरैर्वृतः ॥
स ददर्श ततो देवीं व्याप्तलोकत्रयान्त्विषा ॥
पादाक्रान्त्यानतभुवङ्किरीटोल्लिखिताम्बराम्

दौड़ा और वहाँ देवीजी को देखा जिनकी शोभा तीनों लोक में व्याप्त है ॥ ३७ ॥ जो अपने चरणों से धरती को दबा रही हैं, मुकुट से आकाश

छू रही हैं, धनुष की टंकार से सब पातालों को कंपायमान कर रक्खा है ॥ ३८ ॥ और सहस्र भुजाओं से दिशाओं के चारो ओर व्याप्त हो स्थित है ऐसी देवी जी के साथ असुरों का युद्ध होना प्रारम्भ हुआ ॥ ३९ ॥

क्षोभिताशेषपातालांधनुर्ज्यानिस्स्वनेनताम्
दिशोभुजसहस्रेणसमंताद्व्याप्यसंस्थिताम्
ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुरद्विषाम् ३९
शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपितादिगन्तरम् ।
महिषासुरसेनानीश्चिक्षुराख्यो महासुरः ४०

अनेक प्रकार के चलाये अस्त्र शस्त्रों से दिगन्तर प्रकाशित होगये तब चिक्षुर, नाम का महिषासुर का सेना नायक ॥ ४० ॥ युद्ध करने लगा और

चामर, नामक ने अन्य चतुरंगिणी सेनाओं को साथ ले, देवी जी से युद्ध किया ॥ ४१ ॥ उदग्र, नाम का महा असुर साठ हजार रथों के साथ और

युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्ग बलान्वितः।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्योमहासुरः ४१
अयुध्यतायुतानाञ्च सहस्रेण महाहनुः।
पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमामहासुरः ४२
अयुतानां शतैः षड्भिर्वाष्कलो युयुधे रणे।

असिलोमा, नामक महा असुर पाँच करोड़ रथों को साथ लेकर लड़ने लगा ॥ ४२॥ वाष्कल, नाम का असुर साठ लाख रथ और हाथी घोड़ों के

सेनाओं के साथ लड़ा ॥ ४३ ॥ उस युद्ध में बिडाल नाम राक्षस एक करोड़ रथ के साथ लड़ा और हारने पर पाँच लाख रथों को साथ ले फिर

गजवाजिसहस्रौघै रनेकैः परिवारितः॥४३॥
वृतोरथानाङ्कोट्या च युद्धे तस्मिन्ननयुध्यत।
बिडालाख्योऽयुतानाञ्च पञ्चाशद्भिरथायुतैः।
युयुधे संयुगे तत्र रथानाम्परिवारितः।
अन्ये च तत्रायुतशो रथनागहयैर्वृताः॥४५॥

से लड़ने लगा ॥ ४४ ॥ और भी राक्षस हजारों बड़े बड़े रथ, हाथी और घोड़ों के साथ युद्ध में भगवती के साथ लड़े ॥ ४५ ॥ वहाँ देवीजी के

साथ में करोड़ों रथ और हाथियों को ले महासुर ने युद्ध किया ॥ ४६ ॥ और महिषासुर घोड़ों को साथ ले युद्ध में प्रवृत्त हुआ फिर असुर तोमर,

युयुधुस्संयुगे देव्या सह तत्र महासुराः ।
कोटिकोटिसहस्रैस्तु रथानान्दन्तिनान्तथा ।
हयानाञ्च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः ।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्चशक्तिभिर्मुसलैस्तथा ॥
युयुधुस्संयुगे देव्याः खड्गैः परशुपाट्टिशैः ।

भिन्दिपाल, शक्ति, मूसल, खड्ग, फरसा और पटिया इन शस्त्रों को ले लड़ने

लगे, कोई शक्ति फेंकते थे और पाश चलाते थे ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ खड्ग के प्रहारों से वे देवीजी को मारने के लिये दौड़े और भगवती ने उनके सब

केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित्पाशांस्तथापरे
देवीङ्खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुम्प्रचक्रमुः ।
सापि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका
लीलयैव प्रचिच्छेद निजशस्त्रास्त्रवर्षिणी ।
अनायस्तानना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः ॥

अस्त्रों को ॥ ४९ ॥ क्षण मात्र में अस्त्र शस्त्र बरसा कर काट डाला और प्रसन्न हुईं तब देवता तथा ऋषियों से स्तुति की गईं ॥ ५० ॥ भगवती ने

असुरों के देहों पर अस्त्र शस्त्र फेंका और देवीजी का वाहन सिंह भी क्रोध कर अपनी जटाओं को कँपाने लगा ॥ ५१ ॥ और असुरों की सेना में वन की अग्नि के समान फिरने लगा, रण युद्ध के समय देवीजी ने

मुमोचासुरदेहेषुशस्त्राण्यस्त्राणिचेश्वरी ।
सोऽपिक्रुद्धो धुतसटो देव्या वाहनकेसरी ५१
चचारासुरसैन्येषु वनेष्विवहुताशनः ।
निःश्वासान्मुमुचेयांश्चयुध्यमानारणेऽम्बिका
त एव सद्यः सम्भूता गणाश्शतसहस्रशः ।

जिन असुरों को निश्वास (सिसकते हुए) छोड़ा था ॥ ५२ ॥ वे तत्काल सहस्रों गण हो गये और वे फरसा, भिन्दिपाल, तलवार और पट्टिशों

को ले लड़ने लगे ॥ ५३ ॥ और देवीजी की शक्ति से बढ़े हुए गण असुरों को नाश करते हुए उस युद्धरूपी महोत्सव में ढोल और शङ्ख बजाने

युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासिपट्टिशैः ५३

नाशयन्तोऽसुरगणान्देवी शक्त्युपबृंहिताः ।

अवादयन्त पटहान् गणाःशंखांस्तथापरे

मृदङ्गांश्च तथैवान्ये तस्मिन्युद्धमहोत्सवे ।

ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्तिवृष्टिभिः ५५

लगे ॥ ५४ ॥ कितने मृदङ्ग बजाने लगे तब भगवती त्रिशूल, गदा और शक्ति की वृष्टि ॥ ५५ ॥ तथा खड्गों से सैकड़ों बार बड़े बड़े असुरो को

मारा और कितने दैत्यों को (जो घण्टे के शब्द से मूर्छित होगये थे) पाश से बाँधकर पृथ्वी पर पटक दिया ॥ ५६ ॥ कितने को खीच लिया

खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महासुरान्।
पातयामास चैवान्यान्घंटास्वनविमोहितान्
असुरान्भुवि पाशेन वध्वा चान्यानकर्षयत्।
केचिद्द्विधाकृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे
विपोथितानिपातेन गदया भुवि शेरते।

और कितने को खड्ग के तीक्ष्णधारा से दो खण्ड कर दिया ॥ ५७ ॥ कितने को गदा के प्रहारों से ऐसा मारा कि वे पृथ्वी पर लेट गये, बहुतेरों

को मूशल से ऐसा मारा कि वे मुख से लोहू निकालने लगे ॥५८॥ कितने को छाती में त्रिशूल से विदारण किया, कितने पृथ्वी पर गिर पड़े, कितने को संग्राम में शरों के समूहों से छेद दिया ॥ ५९ ॥ अन्त में सेना के

वेमुश्च केचिद्रुधिरम्मुशलेन भृशंहताः ५८
केचिन्निपतिताभूमौ भिन्नाश्शूलेनवक्षसि ।
निरन्तराश्शरौघेण कृताःकेचिद्रणाजिरे ५९
सेनानुकारिणः प्राणान्मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः ।
केषाञ्चिद्बाहवश्छिन्नाश्छिन्नग्रीवास्तथापरे

साथ वाले असुर अपना अपना प्राण छोड़ने लगे कितनों की भुजाएँ कट गईं, कितनों की ग्रीवा कट गईं ॥ ६० ॥ कितने के शिर कट कर गिर

पड़े कोई बीचही में सो गये, कितने बड़े बड़े असुरों की जँघायें कट गईं और वे भूमि में गिर पड़े ॥६१॥ देवीजी ने कितने असुरों को एक हाथ से आँख तथा एक पैर सहित बीचों बीच चीर डाला और कितने असुर

शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः।
विच्छिन्नजंघास्त्वपरे पेतुरुर्व्याम्महासुराः
एकबाह्वक्षिचरणाः केचिद्देव्या द्विधाकृताः।
छिन्नेऽपि चान्येशिरसिपतिताःपुनरुत्थिताः
कबन्धायुयुधुर्देव्या गृहीतपरमायुधाः।

जिनके शिर कट कर गिर पड़े थे फिर वह उठ बैठे ॥ ६२ ॥ रुण्डों ने बड़े बड़े आयुधों को लेकर भगवती से युद्ध किया, कितने असुर युद्ध में बाजे

के अनुसार नाचने लगे ॥ ६३ ॥ कितने बड़े बड़े असुर जिनके सिर कट गये थे (कबंध रह गये थे) हाथों में खड्ग, शक्ति और दोनों तरफ धारवाली तलवार लेकर ठहरो २ ! कहने लगे ॥ ६४॥ युद्धस्थल में अर्थात्

ननृतुश्चापरे तत्र युद्धेतूर्यलयाश्रिताः ॥६३॥
कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्गशक्त्यृष्टिपाणयः
तिष्ठतिष्ठेतिभाषन्तोदेवीमन्येमहासुराः ६४
पातितैरथनागाश्वै रसुरैश्च वसुन्धरा ।
अगम्यासाऽभवत्तत्र यत्राभूत्समहारणः ६५

जहाँ वह महारण हुआ था वहाँ गिरे हुये रथ, हाथी और घोड़ों से पृथ्वी ऐसी हो गई कि कोई जा न सके ॥ ६५ ॥ युद्धस्थल में असुर, हाथी और

घोड़ों के रुधिर से बड़ी नदियाँ वहने लगीं॥६६॥ क्षण मात्र में जगदम्बा देवी ने असुरों के बड़े सेनापति का इस प्रकार नाश किया कि जैसे कि अग्नि

७५ शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्रविसुस्रुवुः।
मध्येचासुरसैन्यस्यवारणासुरवाजिनाम् ६६
क्षणेनतन्महासैन्यमसुराणान्तथाम्बिका।
निन्येक्षयंयथावह्निस्तृणदारुमहाचयम् ६७
स च सिंहो महानादमुत्सृजन्धुतकेसरः।

में तृण, काष्ठ के बड़े समूह को जला देती है॥ ६७॥ वह सिंह नाद करता और अपनी जटा के वालों को कँपाता हुआ मानों असुरों के शरीरों

में प्राणों को ढूँढ़ने लगा ॥ ६८ ॥ जिस समय देवी के गणों ने असुरों से

शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति६८

देव्यागणैश्चतैस्तत्र कृतं युद्ध न्तथासुरैः ।

यथैषान्तुष्टुवुर्देवाः पुष्पवृष्टिमुचोदिवि ६९

युद्ध किया उस समय देवताओं ने प्रसन्न होकर पुष्पवृष्टि की ॥ ६९ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

महिषासुर सैन्यवधो नामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

उवाच ॥ १ ॥ श्लोकाः ॥ ६८ ॥ एवं ॥ ६९ ॥ एवमादितः ॥ १७३ ॥

—:❀❀❀:—

तृतीयोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां ।
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम् ॥
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं ।
देवींबद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्देसुमन्दस्मिताम् ॥ ३ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

निहन्यमान न्तत्सैन्यमवलोक्य महासुरः ।

ऋषि बोले ॥ १ ॥ सेनाओं का नाश हुये देखकर महिषासुर की सेना

का सेनापति महासुर चित्तुर, क्रोधित हो देवी के साथ युद्ध करने गया ॥२॥
और समर में देवीजी पर बाणों की ऐसी वर्षा की कि मेघ सुमेरु गिरि के

सेनानीश्चित्तुरःकोपाद्ययौ योद्धुमथाम्बिकाम्
स देवीं शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः।
यथा मेरुगिरेः शृगनृतोयवर्षेण तोयदः ३
तस्याच्छित्वा ततो देवीलीलयैव शरोत्करान्।
जघान तुरगान्वाणैर्यन्तारञ्चैव वाजिनाम् ४

शिखर पर जल बरसाता है ॥ ३ ॥ तब भगवती ने अपनी लीला से
उसके बाणसमूहों को काट घोड़ों और घोड़ों के सारथियों को मारा ॥४॥

और शीघ्र ही उसके धनुष तथा बड़ी ऊँची फहराती ध्वजा को काट उस टूटे धनुष वाले के शरीरों को बाणों से छेद डाला ॥ ५ ॥ जब उसका धनुष कट गया, रथ टूट गया और सारथी मारे गये तब वह असुर अपनी

च्चिच्छेदचधनुः सद्योध्वजञ्चातिसमुच्छ्रितम्
विव्याधचैव गात्रेषुच्छिन्नधन्वानमाशुगैः।५।
स च्छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः।
अभ्यधावत तान्देवीङ्खड्ग चर्म्मधरोऽसुरः ६
सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि ।

ढाल तलवार ले देवीजी के सामने दौड़ा ॥६॥ और अपनी तेज धारवाली तलवार से सिंह के माथे पर मार उसने उस तलवार से देवीजी की बाँई

भुजा में बड़े जोर से मारा ॥ ७ ॥ हे राजा, वह तलवार देवीजी की भुजा से स्पर्श होते ही फट गई तब उस असुर ने क्रोध से आँखों को

आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यतिवेगवान् ७
तस्याःखड्गो भुजम्प्राप्य पफाल नृपनन्दन ।
ततोजग्राह शूलं स कोपादरुणलोचनः ८
चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्याम्महासुरः ।
जाज्वल्यमानंतेजोभी रविबिम्बमिवाम्बरात्

लाल करके त्रिशूल लिया ॥ ८ ॥ और भद्रकाली के ऊपर फेंका देवी ने त्रिशूल को तेज से प्रज्ज्वलित आकाश से दूसरे सूर्य्य मंडल के समान

गिरते हुये ॥ ९ ॥ देख कर अपने त्रिशूल को छोड़ा और उस त्रिशूल ने असुर के त्रिशूल को सैकड़ों टुकड़े कर असुर को भी मार डाला ॥ १० ॥ जब महिषासुर का बड़ा पराक्रमी सेनापति मारा गया तब देवताओं का

दृष्ट्वा तदापतच्छूल न्देवी शूलममुञ्चत ।
तच्छूलं शतधातेन नीतं स च महासुरः १०
हते तस्मिन्महावीर्य्यें महिषस्य चमूपतौ ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ११
सोऽपिशक्तिंमुमोचाथदेव्यास्तामम्बिकाद्रुतम्

बैरी चामर, नाम का असुर हाथी पर सवार हो कर आया ॥ ११ ॥ और भगवती के ऊपर शक्ति, छोड़ा, भगवती ने शीघ्र ही हुँकार शब्द से

उसकी शक्ति को पृथ्वी पर गिरा दिया ॥ १२ ॥ चामर ने उस टूटी तथा गिरी हुई शक्ति को देख कर क्रोधित हो शूल फेंका पर देवी ने उसे भी

हुङ्काराभिहतम्भूमौपातयामासनिष्प्रभाम् ।
भग्नांशक्तिं निपातितांदृष्ट्वाक्रोधसमन्वितः
चिक्षेप चामरःशूलं वाणैस्तदपि साच्छिनत्
ततः सिंहःस्समुत्पत्य गजकुम्भान्तरेस्थितः।
बाहुयुद्धेन युयुधेतेनोच्चैस्त्रिदशारिणा ॥१४॥

अपने बाणों से काट गिराया ॥१३॥ फिर सिंह उछल कर हाथी के मस्तक पर चढ़ गया और देवताओं के शत्रु उस असुर से बाहु युद्ध करने लगा

॥१४॥ युद्ध करते करते दोनों सिंह और चामर हाथी पर से नीचे गिरे और अत्यन्त दारुण प्रहारों से लड़ने लगे ॥१५॥ फिर सिंह अकाश में उछल और

युध्यमानौततस्तौतुतस्मान्नागान्महीं गतौ
युयुधातेऽतिसंरब्धौ प्रहारै रतिदारुणैः १५
ततो वेगात्खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा ।
कर प्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक्कृतम् १६
उदग्रश्चरणे देव्या शिलावृक्षादिभिर्हतः ।

वहाँ से पृथ्वी पर कूद करके प्रहार से (पंजे) चामर, का शिर अलग कर दिया ॥१६॥ और युद्ध में भयंकर उदग्र, असुर को देवीजी ने पाषाणों, वृक्षों,

दाँतों, घूसों और लातों से मारा और कराल, को गिरा दिया ॥१७॥ फिर देवीजी ने क्रोधित हो गदा से 'उद्धत' नामक असुर को चूर्ण कर डाला और भिन्दिपाल से 'बाष्कल' को तथा बाणों से 'ताम्र' और 'अन्धक' को मारा ॥१८॥ और

दन्तमुष्टितलैश्चैव करालश्च निपातितः १७
देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णयामास चोद्धतम् ।
वाष्कलंभिन्दिपालेनबाणैस्ताम्रंतथान्धकम्
उग्रास्यमुग्रवीर्य्यं च तथैव च महाहनुम् ।
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी १६

त्रिनेत्रा परमेश्वरी (भगवती) ने उग्रास्य, उग्रवीर्य, तथा महाहनु को त्रिशूल से मारा ॥ १६ ॥ और तलवार से बिड़ाल, नामक असुर का शिर

काट लिया तथा दुर्धर, और दुर्मुख, को शरों से यमलोक को पहुँचाया ॥२०॥
इस प्रकार सब सेनाओं के नाश होने पर महिषासुर भैंसे का रूप धारण

विडालस्यासिनाकायात्पातयामासवैशिरः।
दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्येयमक्षयम् २०
एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये महिषासुरः।
माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान्गणान्
कांश्चित्तुण्ड प्रहारेण खुरक्षेपैस्तथापरान्।

कर देवीजी के गणों को भय दिखाने लगा ॥२१॥ कितनों को (मुख)
के प्रहार से, कितनों को खुर से, कितनों को पूँछ से और कितनों को सींगों

से नाश करने लगा ॥ २२ ॥ कितनों को बड़े वेग से, कितनों को नाद से कितनों को चारों ओर भ्रमण कर और कितनों को स्वाँस के वायु से पृथ्वी

लांगूलताडितांश्चान्यान्शृगाभ्यांचविदारितान्
वेगेन कांश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन च ।
निःश्वासपवनेनान्यान्पातयामासभूतले ॥
निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः ।
सिंहंहन्तुम्महादेव्याःकोपंचक्रे ततोऽम्बिका

पर गिरा दिया ॥ २३ ॥ सुर गणों की सेना को गिरा कर देवीजी के सिंह को मारने को झपटा तब देवीजी ने क्रोध किया ॥ २४ ॥ वह

पराक्रमी असुर भी क्रोधातुर हो खुरों से पृथ्वीतल को खोदने लगा सींगों से ऊँचे २ पर्वतों को फेंकने लगा और नाद करने लगा ।।२५।। उसके वेग

सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुण्णमहीतलः ।
शृङ्गाभ्याम्पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननादच २५
वेगभ्रमण विक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत ।
लांगूलेनाहतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः २६
धुतशृङ्गविभिन्नाश्चखण्डंखण्डंययुर्घनाः ।

पूर्वक घूमने से खुदी हुई पृथ्वी धूल धूल होगई और पूँछ से ताड़ित समुद्र चारों ओर फैलने लगा ॥ २६ ॥ सींगों से फाड़े हुये बादलों के टुकड़े

टुकड़े हो गये और उसके स्वाँस के वायु से सैकड़ों पर्वत आकाश से गिर पड़े ॥ २७ ॥ इस प्रकार क्रोधातुर झपटते हुए इस महा असुर को

श्वासानिलास्ताःशतशोनिपेतुर्नभसोऽचलाः
इति क्रोधसमाध्मातमापतन्त म्महासुरम् ॥
दृष्ट्वासा चण्डिका कोपन्तद्वधाय तदाकरोत्
साक्षिप्त्वातस्य वै पाशंतंबबन्धमहासुरम् ॥
तत्याजमाहिषं रूपं सोऽपिबद्धोमहामृधे २६

देख चण्डिका देवी ने मारने के वास्ते क्रोध किया ॥२८॥ और पाश फेंककर उसे बाँध लिया तब उस असुर ने रण में बँध जाने पर महिष (भैंसे)

का रूप छोड़ दिया ॥ २६ ॥ और तुरंत ही सिंह रूप होगया, ज्योंही देवीजी ने उसका शिर काटना चाहा त्योंही वह हाथ में तलवार लिये पुरुष रूप देख पड़ा ॥ ३० ॥ तब देवीजी ने उसे बाणों से छेद डाला

ततःसिंहोऽभवत्सद्यो यावत्तस्याम्बिका शिरः
छिनत्ति तावत्पुरुषः खड्गपाणिरदृश्यत ॥ ३० ॥
तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः ।
तङ्खड्गचर्मणा सार्द्धन्ततः सोऽभून्महागजः ॥
करेण च महासिंह न्तञ्चकर्ष जगर्ज च ।

फिर वह ढाल तरवार लिये बड़ा हाथी हो गया ॥ ३१ ॥ और अपनी सूँड़ से सिंह को खींचने और गर्जने लगा, सिंह को खीचते देख देवीजी ने

उसके सूँड़ से सिंह को छुड़ाकर तलवार से उसे काट डाला ॥३२॥ तब उस महासुर ने पुनः महिषका रूप धर त्रिलोकी के चराचर को पहिले की नाईं

कर्षतस्तु करन्देवी खड्गेन निरकृन्तत ३२
ततो महा सुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः।
तथैवक्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराचरम् ३३
ततःक्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम्।
पपौ पुनःपुनश्चैव जहासारुण लोचना ॥३४॥

दुःख देने लगा ॥३३॥ तब जगन्माता चण्डिका बारंबार उत्तम मद्य पान कर लाल लाल नेत्र करके हँसने लगीं ॥३४॥ और असुर भी बल तथा वीर्य

से मदोन्मत्त हो घोर नाद करने लगा और पर्वतों को सींगों से उठा उठा देवीजी पर फेंकने लगा ॥ ३५ ॥ उस असुर के फेंके पर्वतों को देवीजी

ननर्द चासुरःसोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः ।
विषाणाभ्याञ्च चिक्षेप चंडिकाम्प्रति भूधरान्
सा च तान्प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः ।
उवाच तम्मदोद्धूत मुखरागाकुलाक्षरम् ३६

देव्युवाच ॥ ३७ ॥

ने अपने बाणों से चूर्ण कर दिया और मधुपान के कारण जिनका मुख लाल हो रहा है ऐसी भगवती जी कहने लगी ॥३६॥ देवीजी बोली ॥३७॥

रे मूर्ख ! जब तक मैं मधु पान करती हूँ तू गर्ज ले जब मैं तुझे इस संग्राम में मारूँगी तब शीघ्र देवता गण गर्जेंगे ॥ ३८ ॥ ऋषि बोले ॥ ३९ ॥ इस

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ मधु[1] यावत्पिबाम्यहम् ।
मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः

ऋषिरुवाच ॥ ३९ ॥

एवमुक्त्वासमुत्पत्यसाऽऽरूढा तम्महासुरम् ।

प्रकार देवी कहकर कूदकर उस महासुर पर चढ़ गईं और चरण से दबा

१ अर्चनं द्विविधं प्रोक्तं वामदक्षिणभेदतः । वामेन वा दक्षिणेन पूजनं तु यथारुचि ॥ अतो-दक्षिणमार्गानुसारिभिरत्र (मधु, पुष्परसं) माक्षिकं देयम् । दक्षिणादुत्तमंवामम्-इतिवचनाद्वाम-मार्गस्थैः स्सैवकैर्विद्वद्भिर्ब्राह्मणैरन्यैर्वाजगदम्बाप्रसन्नतार्थं गौड़ी पैष्टी माध्वी खार्जुरी नारिकेल-जा तालवृक्षादिजा वा सुरा पूजनकाले भगवत्याः प्रतिमायां यन्त्रे, होमकाले चाग्नौप्रदेया । पानेषु मदिरा शस्ता कालिकापुराणे अ० ८३ श्लो० ५१ । इतिवचनात् ।

कर कण्ठ में त्रिशूल से मारने लगी ॥ ४० ॥ फिर वह असुर उनके पराक्रम के सामने परास्त हो गया तब वह भी पाँव के नीचे दबा भया

पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत् ४०
ततस्सोपि पदाक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः।
अर्धनिष्क्रान्तएवासीद्देव्यावीर्येण संवृतः ४१
अर्धनिष्क्रान्त एवाऽसौयुध्यमानोमहासुरः।
तयामहासिना देव्याशिरश्छित्त्वानिपातितः

अपने मुँह से आधा शरीर निकाल देवी के प्रभाव से युक्त भया ॥४१॥ तब देवीजी ने आधे शरीर वाले लड़ते हुए महासुर का शिर बड़े खड्ग से

काट कर गिरा दिया ॥ ४२ ॥ और हाहाकार करती हुई असुर की सब सेनाओं का नाश कर डाला और सब देवतागण बहुत प्रसन्न हुए ॥४३॥

ततो हाहाकृतंसर्वन्दैत्यसैन्य न्ननाश तत् ।
प्रहर्षञ्चपरञ्जग्मुःस्सकला देवतागणाः ॥४३॥
तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः ।
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥४४॥

और बड़े बड़े महर्षियों के साथ देवता लोग देवीजी की स्तुति करने लगे गन्धर्व लोग गाने लगे अप्सरा नाच करने लगीं ॥ ४४ ॥

इति श्रीमार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
महिषासुरवधस्तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥
उवाच ३ श्लोकाः ४१ एवं ४४ एवमादितः ॥ २१७ ॥

चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

कालाभ्राभाङ्कटाक्षैरारिकुलभयदा मौलिबद्धेन्दुरेखां ।
शंखञ्चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहतीन् त्रिनेत्राम् ॥
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलन्तेजसा पूरयन्तीं ।
न्ध्यायेदुर्गाञ्जयाख्यांत्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥४॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

शक्रादयःसुरगणानिहतेऽतिवीर्येंतस्मिन्दुरा-

ऋषि बोले ॥ १ ॥ देवीजी ने जब देवताओं का शत्रु बड़ा पराक्रमी महिषासुर को मारा, तब इन्द्रादि देवों के समूह जिनके सुन्दर शरीर

हर्ष के कारण पुलकायमान हो गये। अपने शिर कण्ठ और कन्धों को झुका कर प्रणाम करके अनेक प्रकार की वाणियों से दुर्गाजी की स्तुति करने लगे ॥ २ ॥ अपनी शक्ति से जिन भगवती ने सम्पूर्ण जगत्

त्मनिसुरारिबलेचदेव्या। तांतुष्टुवुःप्रणतिन-म्रशिरोधरांसा वाग्भिःप्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ २ ॥ देव्या यया ततमिदञ्जगदात्म-शक्त्या निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या। तामम्बिकामखिलदेव महर्षिपूज्याम्भक्त्या

को विस्तृत किया है और जो सब देवताओं के शक्तियों की मूर्ति हैं तथा जो सब देवता और महर्षियों से पूजने के योग्य हैं ऐसी अम्बिका

को हम लोग भक्ति से प्रणाम करते हैं वह हमारे कल्याणों को करे ॥३॥
जिनके अतुल प्रभाव और बल को विष्णु, ब्रह्मा, और महादेव

नताःस्म विदधातु शुभानि सा नः॥३॥यस्याः
प्रभावमतुलम्भगवाननन्तो ब्रह्माहरश्च नहि
वक्तुमलं बलञ्च। सा चण्डिकाऽखिलजगत्प-
रिपालनाय नाशाय चाशुभभयस्यमतिङ्क-
रोतु ॥ ४ ॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनाम्भवने-

वर्णन नहीं कर सकते सो चंडिका सब संसार को पालन तथा अशुभ
भय को नाश करने के निमित्त अपनी बुद्धि करे ॥ ४ ॥ जो पुण्यवान

लोगों के घर में लक्ष्मीरूप, पापी जनों के घर में अलक्ष्मी रूप, शुद्ध अन्तः करण वालों के हृदय में बुद्धि रूप, श्रेष्ठ आचरण वालों को श्रद्धा रूप और सत्कुल में उत्पन्न होने वालों की लज्जा रूप है तिस तुमको हम

ष्वलक्ष्मीः पापात्मनाङ् कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः । श्रद्धासताङ्कुलजनप्रभवस्य लज्जा तान्त्वान्नताःस्म परिपालय देवि विश्वम्॥५॥

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्किञ्चाति-वीर्यमसुरक्षयकारि भूरि । किञ्चाहवेषुचरि

नमस्कार करते हैं । हे देवि ! संसार की रक्षा कीजिये ॥ ५ ॥ हे देवि ! आप अचिन्त्य रूप हैं तथा असुरों के प्रचुर नाशका अति वीर्य का और

देवता तथा असुरों के संग्रामों में आपके अति अद्भुत चरित्रों का किस प्रकार हम लोग वर्णन करें ॥ ६ ॥ त्रिगुण होने पर भी आप सब जगत् की कारण रूप है, राग, द्वेष होने के कारण आपको कौन जान सक्ता है,

तानि तवाति यानि सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥६॥ हेतुः समस्तजगतान् त्रिगुणापि दोषैर्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा। सर्वाश्रयाखिलमिद ञ्जगदंशभूत मव्याकृता हि

विष्णु शिव आदि भी आपको नहीं जान सकते, आपका पार किसी ने नहीं पाया सबों को आप आश्रय देनेवाली हैं समूचा जगत् आपका अंश रूप है, आप छवों विकारों से रहित हैं और परम प्रकृति तथा आदि

शक्ति है ॥ ७ ॥ हे देवि ! सब यज्ञों में आपके नाम का उच्चारण करने से देवतागण तृप्त होते हैं सो स्वाहा रूप आपही हैं तथा पितृगण के भी तृप्ति का कारण आप हैं इस लिये सब लोग आपको स्वधा कहते हैं ॥८॥

परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥७॥ यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन तृप्तिंप्रयाति सकलेषु मखेषुदेवि। स्वाहाऽसि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतुरुच्चार्य्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च॥८॥

या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रतात्वमभ्यस्य-

आप मुक्ति का कारण और अचिन्त्य ब्रह्मज्ञान रूपी महाव्रता हैं अतएव रागद्वेष छोड़ मोक्ष की इच्छा करने वाले और इन्द्रियों को वश

कर लेने से सार तत्व को जानने वाले मुनि लोग आपका अभ्यास करते हैं इस लिये आप सर्वैश्वर्य युक्ता परमा भगवती हैं ॥ ९ ॥ आप

से सुनियतेन्द्रियतत्वसारैः । मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवि ॥ ९ ॥ शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषान्निधानमुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् । देवित्रयी भगवती भव-

(वाणी रूपी) हैं, दोष रहित ऋग्वेद, यजुर्वेद, तथा प्रणव युक्त सुन्दर पदों के पाठ वाले सामवेद की आश्रयभूता हैं, वेदत्रयी हैं, भगवती

हैं, संसार की रक्षा के लिये हैं संसार की आपत्ति को दूर करने वाली वार्ता हैं ॥ १० ॥ हे देवि ! आप बुद्धि रूप हैं सब शास्त्रों के सारको जानती हैं, दुर्गा हैं, दुर्ग भवसागर की नौका हैं, आप अद्वितीया संग रहिता हैं,

भावनाय वार्ता च सर्वजगताम्परमार्तिहन्त्री ॥ १० ॥ मेधासि देविविदिताखिलशास्त्रसारा दुर्गाऽसि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा। श्रीः कैटभारि हृदयैककृताधिवासा गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा॥ ११॥ ईषत्स-

लक्ष्मी हैं, कैटभ के मारने वाले श्री विष्णु भगवान् के हृदय में बास करने वाली हैं, गौरी हैं, शिवजी से प्रतिष्ठा की गई हैं ॥११॥ मन्द मन्द मुस-

कुराता हुआ, निर्मल पूर्ण चन्द्रमा के समान तथा सुवर्ण की उत्तम कांति के समान शोभायमान आपके मुख को देखकर भी महिषासुर ने क्रोध से

हासममलम्परिपूर्णचन्द्रबिम्बानुकारि कन-कोत्तमकान्तिकान्तम्। अत्यद्भुत म्प्रहृत-मात्तरुषा तथापि वक्त्रं विलोक्य सहसा म-हिषासुरेण ॥ १२ ॥ दृष्ट्वा तु देवि कुपित म्भ्रुकुटीकरालमुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न

प्रहार किया ॥ १२ ॥ हे देवि ! क्रोध से भरे भयंकर भृकुटियों तथा पूर्ण चन्द्र के समान आपके मुख को देख तत्काल ही महिषासुर ने प्राण न

छोड़ा यह बहुत आश्चर्य है क्योंकि क्रोधित यमराज को देखकर कौन जीता है ? ॥ १३ ॥ हे देवि ! प्रसन्न होइये, आप महालक्ष्मी हैं और

सद्यः । प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ॥१३॥ देविप्रसीद परमा भवती भवाय सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि । विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतम्बलं सुविपुलं महिषा-

संसार के लिये उत्पन्न होती हैं, जब क्रोध करती हैं, तब दुष्टों के कुलों को नाश कर देती हैं यह बात अभी ज्ञात होगई, क्योंकि महिषासुर की

इतनी सेनाओं का नाश कर दिया ॥ १४ ॥ वेही मनुष्य देशों में प्रतिष्ठा पाते हैं, उन्हीं को धन यश होता है, उन्हीं का धर्म नहीं घटता वेही धन्य

सुरस्य ॥१४॥ ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषान्तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः। धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना।१५॥धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रति-

हैं और उन्हीं को अधिक पुत्र, सेवक तथा स्त्रियाँ होती हैं जिन पर सर्वदा आप प्रसन्न होती हैं ॥ १५ ॥ हे देवि ! आपही के प्रसाद से पुण्यशील

मनुष्य सर्वदा आदर पूर्वक धर्म्म के सब कामों को करते हैं और स्वर्ग जाते हैं अतएव हे देवि ! तीनों लोक में फल देनेवाली निस्सदेह आपही हैं ॥१६॥ हे दुर्गे ! आप, स्मरण करने से सब जीवों के भय को दूर करती हैं, जो

दिनं सुकृती करोति ॥ स्वर्गम्प्रयाति च ततो भवतीप्रसादाल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥ १६ ॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभान्ददासि॥ दारिद्र्यदुःख भयहारिणि कात्वदन्या

शान्त चित्त हो स्मरण करते हैं उन्हें विमल बुद्धि देती हैं। दारिद्रय दुःख तथा भय हरने को, सबका उपकार करने के लिये सिवाय आपके दूसरा

और कौन कृपालु चित्त वाला है॥१७॥ इन असुरों के मारे जाने से संसार को सुख मिलता है, फिर वे नरक के निमित्त बहुत दिनों तक पाप किया करें

सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥१७॥ एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखन्तथैते कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ॥ सङ्ग्राम मृत्युमधिगम्य दिवंप्रयान्तु मत्वेति नूनमहितान्विनिहंसिदेवि॥१८॥ दृष्ट्वैव किं न भवती

और संग्राम में मर कर स्वर्ग जाँय ऐसा सोच कर हे देवि ! आप शत्रुओं को मारती हैं॥१८॥ क्योंकि आप देखही कर सब असुरों को भस्म क्यों नहीं

कर देती अर्थात् कर सकती हैं पर शत्रुओं पर शस्त्र प्रहार करने का कारण यह है कि वे शत्रु भी शस्त्र से पवित्र हो स्वर्गादि लोकों को जाँय इस

प्रकरोति भस्म सर्वासुरानरिषुयत्प्रहिणोषि शस्त्रम् ॥ लोकान्प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्र पूता इत्थम्मतिर्भवति तेष्वहितेषु साध्वी १६

खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः शूलाग्र-कान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् ॥ यन्नाग-

प्रकार उन शत्रुओं में आपकी श्रेष्ठ बुद्धि होती है ॥ १६ ॥ हे देवि ! इसी कारण किरणों से शोभायमान चन्द्र खण्ड के समान आपके मुख

को देखते हुए उन असुरों को दृष्टि, खड्ग के उग्र प्रभा समूहों के निकलने और त्रिशूलों के अग्र भाग की कान्ति-समूहों से नष्ट न हुई ॥ २० ॥ हे

ता विलयमंशुमदिन्दुखण्डयोग्याननन्तव विलोकयतान्तदेतत् ॥ २० ॥ दुर्वृत्तवृत्तशमनन्तव देवि शीलं रूपन्तथैतदविचिन्त्यमतुल्य मन्यैः ॥ वीर्यञ्च हन्तृहृतदेवपराक्रमाणां वैरिष्वापि प्रकटितैव दयात्वयेत्थम् ॥

देवि ! आपका स्वभाव दुराचार को नाश करने वाला है रूप आपका अचिन्त्य तथा अतुल है और आपका बल दैत्यों को मारने वाला है क्यों कि इस प्रकार की दया आपने शत्रुओं पर भी प्रगट की है

॥ २१ ॥ हे देवि ! आपके इस पराक्रम तथा शत्रु को भय देने वाले इस सुन्दर स्वरूप की तुलना किसके साथ हो सकती है। आपके चित्तमें

॥२१॥ केनोपमा भवतु तेऽस्यपराक्रमस्य रूपञ्च शत्रुभयकार्यतिहारी कुत्र ॥ चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा त्वय्येव देवि वरदे भुवन त्रयेऽपि ॥ २२ ॥ त्रैलोक्यमेत-दखिलं रिपु नाशनेन त्रातन्त्वया समरमू-

कृपा और संग्राम में कठोरता देखा, तीनों लोक में आप ही वर देने वाली हैं ॥२२॥ आपने शत्रुओं के नाश, से सम्पूर्ण त्रैलोक्य को बचा लिया शत्रुओं को भी मार कर स्वर्ग पहुँचा दिया तथा पदाहत असुरों से उत्पन्न

मेरे भय को दूर किया आपको नमस्कार है ॥ २३ ॥ हे देवि ! त्रिशूल

र्द्धनितेऽपि हत्वा। नीता दिवं रिपुगणा भय-मप्यपास्तमस्माकमुन्मदसुरारिभवन्नमस्ते ॥२३॥ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके। घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च॥ २४॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च

से हमारी रक्षा कीजिये। हे अम्बिके खड्ग से हमारी रक्षा कीजिये, घण्टा के शब्दों से और धनुष की टंकार से हमारी रक्षा कीजिये ॥ २४ ॥ पूर्व

---

१ खड्गिनीशूलिनी घोरेतिमन्त्रेण, शूलेनेत्यादि ४, सर्वस्वरूपेतिमंत्रेण च शाकल्यादिभिर्न होमः। किंतु एतेषां स्थाने केवलेनघृतेनांबेऽअंबिकेतिमंत्रेण, अम्बायै० ४ मंत्रैश्चहोमः ॥

पश्चिम तथा दक्षिण में हे चण्डिके रक्षा कीजिये और हे ईश्वरी अपना त्रिशूल घुमा कर उत्तर में रक्षा कीजिये ॥२५॥ तीनोंलोक में जितने आपके

चण्डिके रक्ष दक्षिणे। भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यान्तथेश्वरि ॥२५॥ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्तिते। यानिचा-त्यन्त घोराणि तैरक्षास्मांस्तथा भुवम्।२६। खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि ते-

सौम्य तथा अत्यन्त घोर रूप विचरते हैं उनसे हमारी और पृथ्वी की रक्षा कीजिये ॥२६॥ हे अम्बिके ! आप के कर पल्लव में खड्ग शूल तथा गदादि

शस्त्र हैं उनसे सब तरफ हमारी रक्षा कीजिये ॥ ३७ ॥ ऋषि बोले ॥२८॥
कि इस प्रकार देवगणों से स्तुति की गई तथा नन्दन बनमें उत्पन्न दिव्य

ऽम्बिके । करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ २७ ॥

ऋषिरुवाच ॥२८॥

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।
अर्चिता जगतान्धात्री तथागन्धानुलेपनैः ॥
भक्तया समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैः सुधूपिता ।

पुष्पों से तथा गन्धों से पूजित वह जगन्माता ॥ २९ ॥ सब देवताओं से

भक्ति पूर्वक दिव्य धूपों से धूप दी गई प्रसन्न मुख नम्रता पूर्वक देवताओं से बोली ॥ ३० ॥ देवी बोली ॥ ३१ ॥ हे सब देवतागण ! अपनी अपनी

प्राह प्रसाद् सुमुखी समस्तान्प्रणतान्सुरान् ॥

देव्युवाच ॥ ३१ ॥

व्रियतांत्रिदशाःसर्वैयदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम्

देवा ऊचुः ॥ ३२ ॥

भगवत्या कृतं सर्वन्न किञ्चिदवशिष्यते ।

इच्छा पूर्वक वर माँगो ॥ ३२ ॥ देवता बोले ॥३३॥ आपने जो हमारे शत्रु महिषासुर को मारा सो सब कार्य कर दिया अब कुछ बाकी नहीं है॥२४॥

हे महेश्वरी यदि आपको अब और भी वर देना है तो जब हम लोग आपको स्मरण करें तब हमारी आपत्तियों को दूर कीजिये ॥ ३५ ॥ हे निर्मल मुख-

यदयान्निहतः शत्रुरस्माकम्माहिषासुरः ॥३४॥
यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकंमहेश्वरि ।
संस्मृता संस्मृता त्वन्नो हिंसेथाः परमापदः॥
यश्च मर्त्यस्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ।
तस्यावित्तार्द्धिविभवैर्धनदारादिसम्पदाम् ।३६

वाली जो मनुष्य इन स्तोत्रों से आप की स्तुति करता है उसके धन, ऐश्वर्य, स्त्री और सम्पत्ति आदि की वृद्धि कीजिये और हे अम्बिके! हमारे

ऊपर सदा प्रसन्न रहिये ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ऋषि बोले ॥ ३८ ॥ हे राजन् ! देवताओं से जगत् के लिये और अपने अर्थ प्रसन्न की हुई भद्रकाली "ऐसा

वृद्धये स्मत्प्रसन्ना त्वम्भवेथाःसर्वदाम्बिके ॥

ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥

इति प्रसादिता दैवैर्जगतोऽर्थैतथात्मनः ।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥
इत्येतत्कथितम्भूप सम्भूता सा यथा पुरा ।

ही होगा" यह कह कर अन्तर्ध्यान हो गई ॥ ३९ ॥ हे राजन् ! देवताओं के शरीर से तीनों लोक के हित की इच्छा करने वाली देवी जिस प्रकार पहिले उत्पन्न हुई थी सो सब कह दिया ॥ ४० ॥ फिर पार्वती के देह से

दुष्ट दैत्यों और शुम्भ निशुम्भ को मारने तथा लोकों की रक्षा के लिये

देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥४०॥
पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्भूता यथाऽभवत्।
वधाय दुष्टदैत्यानान्तथा शुम्भनिशुम्भयोः॥
रक्षणाय च लोकानान्देवानामुपकारिणी।
तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथावत्कथयामि ते॥

देवताओं का उपकार करने वाली भगवती जिस प्रकार उत्पन्न हुई सो मुझसे सुनिये मैं यथावत् कहता हूँ ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

इति श्रीमार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शक्रादिस्स्तुतिश्चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ उवाच ५ अर्ध २ श्लोकाः ३५ एवं ४२ एवमादितः ॥ २५६ ॥

पञ्चमोऽध्यायः ।

ॐ अस्य श्रीउत्तमचरित्रस्य रुद्र ऋषिः महासरस्वतीदेवता अनुष्टुप्छन्दः भीमा शक्तिः क्लीं भ्रामरीवीजम् सूर्य्यस्तत्वम् सामवेदः स्वरूपं महासरस्वती प्रीत्यर्थे उत्तमचारित्रजपे विनियोगः ॥ ३ ॥

उत्तम चरित के रुद्र ऋषि,महा सरस्वतीदेवता, अनुष्टुप् छन्द, भीमा शक्ति,भ्रामरी बीज,सूर्य्य तत्त्व और सामवेद मूर्ति है और महा सरस्वती के प्रीत्यर्थ इस चरित्र का विनियोग है (विनियोग पढ़के जल छोड़ना)।

घंटा, शूल, हल, शंख, मुसल, चक्र, धनुष और बाण कर कमलों में धारण किये मेघों के बीच में चमकते हुए चन्द्रमा के समान कांति वाली गौरी के शरीर से उत्पन्न त्रिलोक की आधार भूत शुम्भादि दैत्यों को मारने वाली ऐसी अनादि महासरस्वती को मैं भजता हूँ ॥ ३ ॥

अथ ध्यानम् ।

घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकं ।
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ॥
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा ।
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥ ३ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः ।
त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात् २

ऋषि बोले ॥ १ ॥ पूर्व काल में शुम्भ तथा निशुम्भ नामक दो असुरों ने घमण्ड के बल से इन्द्र के त्रैलोक्य का राज्य और यज्ञों का भाग

छीन लिया ॥ २ ॥ वे दोनों सूर्य और चन्द्रमा के अधिकारों को तथा कुबेर, यम और वरुण के अधिकारों को करने लगे ॥ ३ ॥ वही दोनों

तावेव सूर्यतान्तद्वदधिकारन्तथैन्दवम् ।
कौवेरमथ याम्यञ्च चक्राते वरुणस्य च ॥३॥
तावेव पवनर्द्धिञ्च चक्रतुर्वह्निकर्म च ।
ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्टराज्याः पराजिताः ४
हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः।

पवन तथा अग्नि के कामों को करने लगे, जब पराजित, और राज्य से भ्रष्ट देवता निकाल दिये गये ॥ ४ ॥ तब उन महावली असुरों से

तिरस्कृत तथा अधिकार रहित देवतागण उस अपराजिता देवी का इस प्रकार से स्मरण करने लगे कि ॥ ५ ॥ भगवती ने हमें ऐसा वर दिया था कि आपत्ति में जब तुम हमें स्मरण करोगे तब मैं तुम्हारी

महासुराभ्यान्तान्देवींसंस्मरन्त्यपराजिताम्
तयाऽस्माकं वरोदत्तो यथापत्सु स्मृताखिलाः
भवतान्नाशयिष्यामि तत्क्षणात्परमापदः॥
इति कृत्वा मतिन्देवा हिमवन्तन्नगेश्वरम् ।
जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायाम्प्रतुष्टुवुः ७

सब आपत्तियों को तत्क्षण नाश कर दूँगी ॥ ६ ॥ देवतागण ऐसी सम्मति करके पर्वतों में शिरोमणि, हिमालय, पर्वत पर गये और वहाँ

विष्णु माया, देवी की स्तुति करने लगे ॥७॥ देवता बोले ॥ ८ ॥ देवी, महादेवि, शिवा, को निरन्तर नमस्कार है, प्रकृति को भद्रा को नियम में

देवा ऊचुः ॥ ८ ॥

नमोदेव्यै महादेव्यै शिवायै सततन्नमः।
नमःप्रकृत्यै भद्रायै नियताःप्रणताःस्मताम् ६
रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततन्नमः

स्थिर होकर नमस्कार है ॥ ६ ॥ रौद्रा को, नित्या को गौरी और धात्री को नमस्कार है, चंद्रिका को चन्द्ररूप और सुखस्वरूपिणी को निरन्तर नमस्कार

है ॥१०॥ कल्याणी प्रणत पुरुषों के लिये वृद्धिरूपा और सिद्धि को कूर्मीको नमस्कार है तथा नैर्ऋति, राजाओं की लक्ष्मी को और शर्वाणी को नमस्कार है ॥ ११ ॥ दुर्गा को दुर्ग से पार करनेवाली को, सारा को सर्वकारिणी को

कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कूर्म्यै नमोनमः
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमोनमः॥
दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततन्नमः१२
अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः।

ख्याति को, कृष्णा को और धूम्रावती को निरंतर नमस्कार है ॥ १२ ॥ अति सौम्य तथा अत्यन्त रौद्र रूप वाली को विनय पूर्वक नमस्कार है।

जगत् की अत्यन्त प्रतिष्ठास्वरूपिणी तथा कृति (कार्य्य रूपिणी) देवी को नमस्कार है ॥ १३ ॥ जो देवी प्राणियों में विष्णुमाया नाम से पुकारी

नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः १३
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै॥ १४॥नमस्तस्यै॥ १५॥नमस्तस्यै
नमोनमः ॥ १६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु चेतने-

जाती हैं उनको नमस्कार है ॥ १४ ॥ नमस्कार है ३ ॥१५॥१६॥ जो देवी प्राणियों में चेतन नाम से पुकारी जाती हैं उनको नमस्कार है ॥ १७ ॥

१-एवं पुनर्द्विवारं चतुर्विंशत्यक्षरमन्त्रोच्चारणमेवंत्रयोमन्त्राभवन्ति । एवमग्रे चेतनादि मन्त्रेषु बोध्यम् । इति श्रीबालमुकुन्द पाण्डेयः ।

नमस्कार है ३ ॥ १८ ॥ १९ ॥ जो देवी प्राणियों में बुद्धिरूप से स्थित है उनको नमस्कार है ॥ २० ॥ नमस्कार है ३ ॥ २१ ॥ २२ ॥ जो देवी प्राणि-

त्यभिधीयते । नमस्तस्यै ॥ १७ ॥ नमस्तस्यै ॥ १८ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ २० ॥ नमस्तस्यै ॥ २१ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै । २३ ।

यों में निद्रा रूप से विराजमान है उनको नमस्कार है ॥ २३ ॥ नमस्कार

है ३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ जो देवी प्राणियों में क्षुधा रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार है ॥ २६ ॥ नमस्कार है ३ ॥ २७ ॥ २८ ॥ जो देवी प्राणियों में

नमस्तस्यै॥२४॥नमस्तस्यै नमो नमः॥२५॥
या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ॥ २६ ॥ नमस्तस्यै ॥ २७ ॥
नमस्तस्यै नमो नमः ॥२८॥ या देवी सर्व-
भूतेषु च्छायारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
॥ २९ ॥ नमस्तस्यै ॥३०॥ नमस्तस्यै नमो

छाया रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ २९ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ३०॥

॥ ३१ ॥ जो देवी प्राणियों में शक्ति रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ३२ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ जो देवी प्राणियों में तृष्णा

नमः ॥ ३१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ।३२। नमस्तस्यै ।३३। नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ३४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता।नमस्तस्यै।३५। नमस्तस्यै॥३६॥ नमस्तस्यै नमो नमः॥३७॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।

रूप से स्थित है, उनको नमस्कार है ॥ ३५ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

नमस्कार है ३ ॥ ३६ ॥ ४० ॥ जो देवी प्राणियों में जाति रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ४१ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ जो देवी

नमस्तस्यै ॥ ३८ ॥ नमस्तस्यै ॥३६॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ४० ॥ या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ४१ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४२ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ४३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।नमस्तस्यै ॥४४॥ नमस्तस्यै ॥४५॥

प्राणियों में लज्जा रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार है ॥ ४४ ॥ नमस्कार

है ३ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ जो देवी प्राणियों में शान्ति रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ४७ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ४८ ॥ ४६ ॥ जो देवी सब प्राणियों

नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ४६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ४७ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४८ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ४६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ५० ॥ नमस्तस्यै ॥ ५१ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ५२ ॥ या

में श्रद्धा रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ५० ॥ नमस्कार है ॥ ५१ ॥

जो देवी प्राणियों में क्षान्ति रूप से स्थित हैं, उनको नमस्कार है ॥ ३८ ॥
॥ ५२ ॥ जो देवी प्राणियों में कान्ति रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार
है ॥ ५३ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ जो देवी प्राणियों में लक्ष्मी रूप

देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता । नम-
स्तस्यै ॥५३॥ नमस्तस्यै ॥ ५४ ॥ नमस्तस्यै
नमो नमः ॥५५॥ या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मी-
रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥५६॥ नमस्तस्यै
॥ ५७ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ५८ ॥ या

से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ५६ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥
जो देवी प्राणियों में वृत्ति रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ५९ ॥

नमस्कार है ३ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ जो देवी प्राणियों में स्मृति रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ६२ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ जो

देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ५९ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६० ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ६२ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६३ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।

देवी प्राणियों में दया रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ६५ ॥

नमस्कार है ३ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ जो देवी प्राणियों में तुष्टि रूप से स्थित हैं
उनको नमस्कार है ॥ ६८ ॥ नमस्कार है ३ ॥६९॥७०॥ जो देवी प्राणियों

नमस्तस्यै ॥ ६५ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६६ ॥ नम-
स्तस्यै नमो नमः ॥ ६७॥ या देवी सर्वभूतेषु
तुष्टिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ६८ ॥
नमस्तस्यै॥६९॥ नमस्तस्यै नमो नमः॥७०॥
या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता । नम-
स्तस्यै ॥ ७१ ॥ नमस्तस्यै ॥ ७२॥ नमस्त-

में मातृ रूप से स्थित है उनको नमस्कार है ॥७१ नमस्कार है ३ ॥ ७२ ॥

॥ ७३ ॥ जो देवी प्राणियों में भ्रान्ति रूप से स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ७४ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ जो देवी सब इन्द्रियों की तथा

स्यै नमो नमः ॥ ७३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता नमस्तस्यै ॥ ७४ ॥ नमस्तस्यै ॥ ७५ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ।७६।इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानाञ्चाखि-लेषु या ॥ भूतेषु सततन्तस्यै व्याप्ति देव्यै नमो नमः ॥ ७७॥ चितिरूपेण याकृत्स्नमेतद्-

प्राणियों की अधिष्ठात्री हैं और सब प्राणियों में निरन्तर व्याप्त हैं उनको

नमस्कार है ॥ ७७ ॥ जो देवी चैतन्य रूप जगत् में व्याप्त होकर स्थित हैं उनको नमस्कार है ॥ ७८ ॥ नमस्कार है ३ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ पूर्व काल में अभीष्ट फल पाने के निमित्त देवताओं ने जिनकी स्तुति की, और इन्द्र ने

व्याप्य स्थिता जगत् । नमस्तस्यै ॥ ७८ ॥ नमस्तस्यै ॥ ७९ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ८० ॥ स्तुतासुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता । करोतु सा नः शुभ-हेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः

जिनकी बहुत दिनों तक सेवा की, जो मङ्गल की कारण है सो भगवती शुभ कल्याण को करे और आपत्तियों का नाश करे ॥ ८१ ॥ जिनको

प्रचण्ड दैत्यों से दुखी हमलोग देवतागण नमस्कार करते हैं और जो नम्र मूर्ति वालों से भक्ति पूर्वक स्मरण किये जाने पर उसी क्षण सब

॥ ८१ ॥ या सांप्रतञ्चोद्धतदैत्यतापितैर्-स्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते । या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ८१ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ८३ ॥ एवंस्तवादियुक्तानान्देवानान्तत्र पार्वती ।

आपत्तियों को नाश कर देती है ॥८२॥ ऋषि बोले ॥८३॥ हे नृपनन्दन ! इस तरह स्तुति करते हुये देवताओं के सन्मुख पार्वती जी वहाँ गङ्गाजल

में स्नान करने के निमित्त आई ॥ ८४ ॥ और सुन्दर भृकुटियों से शोभित पार्वती जी उन देवताओं से पूछने लगीं कि तुम किसकी स्तुति करते हो, इतना कहते ही पार्वती जी के शरीर से शिवा उत्पन्न होकर बोली ॥८५॥

स्नातुमभ्यायय्यौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन॥
साऽब्रवीत्तान्सुरान्सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का।
शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताऽब्रवीच्छिवा
स्तोत्रम्ममैतत्क्रियते शुम्भदैत्यनिराकृतैः।
देवैः समेतैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ॥८६॥

कि शुम्भ दैत्य से निकाले और निशुम्भ से युद्ध में हारे हुए सब देवता मिल कर मेरी ही स्तुति करते हैं ॥ ८६ ॥ पार्वती जी के शरीर कोश से

अम्बिका निकली इसलिये सम्पूर्ण लोक में सब लोग इन्हें कौशिकी कहते हैं ॥ ८७ ॥ जब कौशिकी शरीर से निकली तो पार्वती का शरीर कृष्णवर्ण

शरीरकोशाद्यत्तस्याःपार्वत्यानिःसृताम्बिका
कौशिकीति समस्तेषु ततोलोकेषु गीयते ॥
तस्यांविनिर्गतायान्तुकृष्णाऽभूत्सापिपार्वती
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया
ततोऽम्बिकाम्परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहरम् ।

हो गया और कालिका नाम से प्रसिद्ध हो हिमाचल पर रहने लगी ॥८८॥ अम्बिका को परम सुन्दर रूप धारण करते शुम्भ निशुम्भ के भृत्य चण्ड

मुण्ड ने देखा ॥ ८९ ॥ और जाकर शुम्भ से कहा हे महाराज! परम सुन्दरी कोई स्त्री हिमाचल पर है ॥ ९० ॥ हे असुरेश्वर! उस रूप से

ददर्श चण्डोमुण्डश्च भृत्यौ शुम्भनिशुम्भयोः
ताभ्यां शुम्भायचाख्याता सातीव सुमनोहरा
काप्यास्ते स्त्रीमहाराजभासयंती हिमाचलम्
नैवतादृक् क्वचिद्रूपन्दृष्टङ्केनचिदुत्तमम् ।
ज्ञायताङ्काप्यसौ देवी गृह्यतांचासुरेश्वर ९१

उत्तम रूप किसी ने कहीं नहीं देखा अतएव समझ लीजिये कि कोई ये देवी है। आप इसको ग्रहण कीजिये ॥ ९१ ॥ वह सुन्दरांगी स्त्रियों में

रत्नरूप है, अपनी शोभा से दिशाओं को उज्ज्वल करती हुई बैठी है इसलिये आपको चल कर देखना चाहिये ॥ ६२ ॥ हे महाराज ! तीनों

स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गीद्योतयन्ती दिशस्त्विषा।
सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्रतांभवान्द्रष्टुमर्हति ६२
यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनिवैप्रभो।
त्रैलोक्ये तु समस्तानिसांप्रतं भान्तितेगृहे ६३
ऐरावतस्समानीतो गजरत्नम्पुरन्दरात्।

लोक में के रत्न, मणि, हाथी और घोड़े सभी आपके गृह में शोभायमान हैं ॥ ६३ ॥ हाथियों में रत्न के समान ऐरावत हाथी, पारिजात वृक्ष, और

उच्चैःश्रवा घोड़ा इन्द्र के यहाँ से लाया गया है ॥ ६४ ॥ विधाता का रत्न-जड़ित अद्भुत तथा हंसयुक्त विमान आपके आंगन में रखा है ॥६५॥

पारिजाततरुश्चायन्तथैवोच्चैः श्रवा हयः ६४

विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति तेऽङ्गणे ।

रत्नभूतमिहानीतं यदासीद्वेधसोऽद्भुतम् ॥

निधिरेष महापद्मः समानीतो धनेश्वरात् ।

किञ्जल्किनींददौचाब्धिर्मालामम्लान पङ्कजाम्

ये निधि महापद्म कुबेर के यहाँ से लाया गया है । और किञ्जल्किनी नामक खिले कमलों की माला आपको समुद्र ने दी थी ॥ ६६ ॥ काञ्चन

स्त्रावि नामक वरुण का छत्र तथा सुन्दर रथ जो पहिले प्रजापति का था सो भी आपके यहाँ है ॥ ६७ ॥ हे ईश ! उत्क्रांतिदा नामक यमराज की

छत्रन्ते वारुणङ्गेहे काञ्चनस्त्रावि तिष्ठति।
तथाऽयंस्यन्दनवरो यः पुरासीत्प्रजापतेः ६७
मृत्योरुत्क्रान्तिदानामशक्तिरीशत्वयाऽहृता
पाशःसलिलराजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ६८
निशुम्भस्याब्धिजाताश्चसमस्तारत्नजातयः

शक्ति आपने छीन ली है और आपके भाई निशुम्भ के यहाँ वरुणदेव का पाश ॥ ६८ ॥ तथा समुद्र से उत्पन्न सम्पूर्ण रत्न हैं, अग्निदेव ने

आपको दो वस्त्र ऐसे दिये हैं कि जो अग्नि में गिरने से भी नहीं जलते हैं ॥ ९९ ॥ हे दैत्येन्द्र ! इस प्रकार आपके यहाँ सब रत्न आ गये तब

वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ९९

एवन्दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते

स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते

ऋषिरुवाच ॥ १०१ ॥

निशम्येति वचः शुंभः स तदा चण्डमुण्डयोः।

यह कल्याणकारिणी स्त्री रूपी रत्न क्यों नहीं लेते हैं ॥१००॥ ऋषि बोले ॥ १०१ ॥ चण्डमुण्ड की बातों को सुन शुम्भ ने सुग्रीव नामक महासुर

को देवी के पास दूत बनाकर भेजा ॥ १०२ ॥ और उसे जो कहना था
समझा दिया कि जाकर मेरी ओर से कहना और जिस प्रकार प्रसन्नता

प्रेषयामास सुग्रीवन्दूतन्देव्या महासुरम्
इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम ।
यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथाकार्यन्त्वयालघु
स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने ।
सा देवी तान्ततःप्राह श्लक्ष्णम्मधुरया गिरा ॥

पूर्वक वह यहाँ आवे उसे शीघ्र करना ॥ १०३ ॥ वह दूत पर्वत के जिस
रमणीय स्थान में देवी बैठी थी वहाँ जाकर मधुर वाणी से बोला ॥१०४॥

दूत बोला ॥ १०५ ॥ हे देवी ! शुम्भ नामक दैत्यों का राजा और तीनों लोक का ईश्वर है। उन्हों ने मुझे दूत बना कर भेजा है अतएव मैं आपके

दूतउवाच ॥ १०५ ॥

देवि दैत्येश्वरः शुम्भ स्त्रैलोक्यपरमेश्वरः ।
दूतोऽहम्प्रेषितस्तेनत्वत्सकाशमिहागतः ॥
अव्याहताज्ञः सर्वासु यःसदा देवयोनिषु ।
निर्जिताखिलदैत्यारिःस यदाह शृणुष्व तत् ॥

पास आया हूँ ॥ १०६ ॥ सब देवताओं में जिनकी आज्ञा नहीं टल सकती और जिनने सभी को जीत लिया है उनने जो कहा है सो सुनिये ॥१०७॥

त्रैलोक्य मेरा है, सब देव मेरे वश में हैं, और यज्ञ के सम्पूर्ण भागों को मैं पृथक् पृथक् लेता हूँ ॥ १०८ ॥ त्रैलोक्य के जितने सुन्दर रत्न हैं सो

ममत्रैलोक्यमखिलम्मम देवा वशानुगाः ।
यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक् ॥
त्रैलोक्यवररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः ।
तथैव गजरत्नानि हृत्वादेवेन्द्रवाहनम् १०९
क्षीरोदमथनोद्भूत मश्वरत्नम्ममामरैः ।

सब मेरे वश में हैं, सब गज रत्न (गजमुक्ता) और इन्द्रका वाहन ऐरावत भी मैंने हर लिया है ॥ १०९ ॥ समुद्र मथने से निकला हुआ उच्चैः

श्रवा नाम का घोड़ा देवताओं ने मुझे नमस्कार करके दिया है ॥ ११० ॥
हे सुन्दरि ! देवता, गन्धर्व और नागों में जो जो रत्न थे सो सब मेरे

उच्चैः श्रवससञ्ज्ञन्तत्प्राणिपत्य समर्पितम् ॥
यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च ।
रत्नभूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ॥
स्त्रीरत्नभूतांत्वान्देवि लोके मन्यामहे वयम् ।
सात्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्नभुजोवयम् ॥

यहाँ है ॥१११॥ हे देवी ! संसार में हमलोग तुमको स्त्रियों में रत्न समझते
हैं सो तुम हमारे यहाँ चली आओ क्योंकि रत्नों के भोगने वाले हम ही

हैं ॥ ११२ ॥ हे चंचल कटाक्ष वाली ! हमें वा मेरे पराक्रमी छोटे भाई निशुम्भ को भजो क्योंकि तुम रत्नस्वरूप हो ॥ ११३ ॥ मेरे पास आने

मां वा ममानुजं वाऽपि निशुम्भमुरुविक्रमम्
भजत्वञ्चञ्चलापाङ्गि रत्नभूताऽसि वै यतः ॥
परमैश्वर्यमतुलम्प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात् ।
एतद्बुद्ध्या समालोच्य मत्परिग्रहतां व्रज ॥

ऋषिरुवाच ॥ ११५ ॥

से अतुल परम ऐश्वर्य्य पाओगी । ये बुद्धि द्वारा विचार कर मेरी स्त्री हो जाओ ॥११४॥ ऋषि बोले ॥११५॥ दूत से इस प्रकार कही गयी वह

दुर्गा, भगवती, भद्रा, देवी जो सब जगत् को धारण करती है गम्भीर हो अन्तःकरण में हँस कर बोली ॥ ११६ ॥ देवी बोली ॥ ११७ ॥ तुमने

इत्युक्ता सा तदा देवी गंभीरांतः स्मिता जगौ ।
दुर्गा भगवती भद्रा ययेदन्धार्यते जगत् ॥

देव्युवाच ॥ ११७ ॥

सत्यमुक्तंत्वयानात्रमिथ्याकिञ्चित्वयोदितम्
त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भोनिशुंभश्चापिताहशः

सत्य कहा इसमें कुछ भी मिथ्या नहीं है, शुम्भ तीनों लोक का स्वामी है और निशुम्भ भी वैसा ही है ॥ ११८ ॥ परन्तु मैंने जो पहिले प्रतिज्ञा किया है

सो कैसे मिथ्या करूँ, अल्प बुद्धि द्वारा जो मैंने प्रतिज्ञा की है सो सुनो ॥ ११९ ॥ जो मुझे युद्ध में जीतेगा, जो मेरे अभिमान को तोड़ेगा और

किंत्वत्रयत्प्रतिज्ञातंमिथ्यातत्क्रियते कथम् ।
श्रूयतामल्पबुद्धित्वात्प्रतिज्ञा या कृता पुरा ॥
यो माञ्जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति ।
यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ॥
तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः

जो संसार में मेरे समान बली होगा वही मेरा पति होगा ॥ १२० ॥ अतएव महासुर शुम्भ वा निशुम्भ कोई आवे और हमको जीतकर शीघ्र

ही विवाह कर लेवे इसमें विलम्ब का क्या काम है ॥ १२१ ॥ दूत बोला ॥ १२२ ॥ हे देवी ! तुमको बड़ा अभिमान है, मेरे सामने फिर कभी

माञ्ज्ञत्वाकिञ्च्रेरणात्रपाणिंगृह्णातुमेलघु ॥

दूत उवाच ॥ १२२ ॥

अवलिप्ताऽसि मैवन्त्वन्देवि ब्रूहि ममाग्रतः ।
त्रैलोक्येकःपुमांस्तिष्ठेदग्रेशुम्भनिशुम्भयोः॥
अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि ।

ऐसा मत कहना । तीनों लोक में ऐसा कौन पुरुष है जो शुम्भ और निशुम्भ के सामने ठहरे ॥ १२३ ॥ हे देवी ! अन्य कोई दैत्य वा देवता

भी उनके सामने युद्ध में नहीं ठहरते तब तुम एक स्त्री क्या हो ॥ १२४ ॥
जिन शुम्भादिक के सम्मुख युद्ध में इन्द्र आदि सब देवता नहीं ठहरे उनके

तिष्ठन्ति संमुखे देवि किं पुनः स्त्री त्वमेकिका ॥
इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषान्न संयुगे ।
शुंभादीनाङ्कथन्तेषांस्त्रीप्रयास्यासिसम्मुखम् ।
सात्वङ्गच्छमयैवोक्ता पार्श्वंशुम्भनिशुम्भयोः
केशाकर्षणनिर्धूतगौरवामागमिष्यसि १२६

सामने तुम अकेली स्त्री कैसे जाओगी ॥ १२५ ॥ अतएव मेरे कहने से
शुम्भ निशुम्भ के पास चलो, नहीं तो केश पकड़ कर ले चलूँगा, तो सब

गौरव नष्ट हो जायगा ॥ १२६ ॥ देवी बोली ॥ १२७ ॥ सब सत्य है शुम्भ बली है और निशुम्भ भी बड़ा पराक्रमी है पर क्या करूँ मैंने अपनी

देव्युवाच ॥ १२७ ॥

एवमेतद्बली शुंभो निशुम्भश्चातिवीर्यवान् ।
किङ्करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ॥
स त्वङ्गच्छ मयोक्तन्ते यदेतत्सर्वमादृतः ।
तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तङ्करोतुयत् ॥

प्रतिज्ञा पहिले बिना विचारे कर लिया ॥१२८॥ सो तुम जाओ और मैंने जो कहा है सो आदर पूर्वक असुरेन्द्र शुम्भ से और निशुम्भ से कह दो फिर जो वह ठीक समझे वह करे ॥ १२९ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये दूत संवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ उवाच ॥ ६ ॥ खंडानि ॥ ६६ ॥ श्लोकाः ॥ ५४ ॥ एवम् ॥ ॥ १२६ ॥ एवमादितः ॥ ३८८ ॥

मंत्र महोदधौ ।

१८ तरंगे श्लोकाः । मार्कण्डेय पुराणोक्त नित्यं चण्डीस्तवम्पठन् ॥ पुटितम्मूलमन्त्रेण जपन्नाप्नोति वाञ्छितम् ॥ १५८ ॥ आश्विनस्यासितेपक्षे आरभ्याग्नि तिथिंसुधीः । अष्टम्यन्तं जपेल्लक्षं दशांशंहोम माचरेत् ॥१५९॥ प्रत्यहम्पूजयेद्देवीं पठेत्सप्तशती मपि ॥ विप्रानाराध्य मन्त्री स्वमिष्टार्थं लभतेऽचिरात् ॥ १६० ॥ मूल मंत्रस्तु ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इति ॥

सप्तशत्या स्तथा देवी एकैकश्लोक एववा ॥ मन्त्रे सहस्र संख्यास्याच्छ-क्तावयुत मेववा ॥ १ ॥ उभयत्रापि दातव्याः कर्मान्ते दक्षिणाःशुभाः॥ इदं कर्मद्वयं देविमूर्त्तेः पुरत आचरेत् ॥ २ ॥ नाप्यदीक्षितयं कार्यं क्षपायां वा सराहते ॥ तस्यां कृतन्तु विफलं जायते वेदशासनात् ॥ ३ ॥ देवी सप्तशती

पाठं गृह्णाति विधिनाकृतम् ॥ विधिना वाप्यविधिना पुनर्होमं प्रयच्छति ॥ ४ ॥ इति पुरश्चर्यार्णवे शारदीयनवरात्रविषये ॥

भावार्थः। यथाशक्ति सप्तशती पाठमात्रं दश १० शत १०० सहस्र १००० संख्या परिमितं वा कर्त्तव्यम्। दिनेऽथवारात्रौ यदैव श्रद्धोत्पत्ति स्त-दैवकर्त्तव्यमित्येकः पक्षः। सप्तशत्या एकैकस्यापि श्लोकस्य मन्त्रत्वमतः सहस्रं १००० दश सहस्रं वा १०००० जपः कर्त्तव्य इति द्वितीयः पक्षः। पाठ पूर्तौ जप पूर्तौ च कर्मान्ते शुभादक्षिणादेयाः। इदंकर्म द्वयं प्रतिमायाः पुरतः कर्त-व्यम्। सहैव कर्म द्वय करणे दिनं विहाय रात्रौ न करणीयम्। रात्रौ कृतं चेदफलं वेदाज्ञयेति मन्त्र पाठ विषये। देवी सप्तशती पाठं तु विधिनाऽविधिना कृतं गृह्णात्येव। पाठानन्तरं होमःकर्त्तव्यः। एवं जपान्तेपिहोमादिः। इति वेद-वित्पण्डिताग्निहोत्रिणः कर्मकाण्डाचार्याः काशीनाथमिश्रमहोदयाः ॥

—:❀❀:❀❀:—
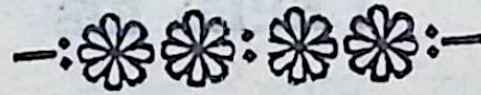
षष्ठोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

नागाधीश्वरविष्टरां फणिफणोत्तंसोरु रत्नावलीं ।
भास्वद्देहलतां दिवाकरनिभां नेत्रत्रयोद्भासिताम् ॥
मालाकुंभ कपालनीरजकरां चन्द्रार्द्धचूडाम्परां ।
सर्वज्ञेश्वरभैरवांक निलयां पद्मावतीं चिन्तये ॥ ६ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्षपूरितः ।

ऋषि बोले ॥ १ ॥ वह दूत देवीजी से इन बातों को सुन क्रोध से

पूरित हो दैत्यराज से आकर विस्तार पूर्वक कहने लगा ॥२॥ तब दैत्यराज दूत का यह बचन सुन क्रोध से युक्त हो दैत्यों के अधिपति धूम्रलोचन से

समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात् २
तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः ।
सक्रोधः प्राह दैत्यानामधिपन्धूम्रलोचनम् ३
हे धूम्रलोचनाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः ।
तामानय बलाद्दुष्टाङ्केशाकर्षण विह्वलाम् ४

बोला ॥ ३ ॥ हे धूम्रलोचन ! तू जल्द अपनी सेना को साथ ले जा और केश खीचने से विह्वल होती हुई उस दुष्ट स्त्री को (बलात्) जबरदस्ती

ले आ ॥ ४ ॥ यदि उसे बचाने के लिये कोई देवता, यक्ष अथवा गन्धर्व उद्यत हों तो उसे मारना ॥ ५ ॥ ऋषि बोले ॥ ६ ॥ धूम्रलोचन दैत्य

तत्परित्राणदः कश्चिद्यदिवोत्तिष्ठतेऽपरः ।
सहन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा ५

ऋषिरुवाच ॥ ६ ॥

तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः ।
वृतः षष्ट्या सहस्राणामसुराणान्द्रुतं ययौ ७
सद्दृष्ट्वातांततोदेवीन्तुहिनाचलसंस्थिताम् ।

उसकी आज्ञा पाकर साठ हजार सेना लेकर शीघ्र गया ॥ ७ ॥ और

हिमालय पर बैठी देवी को देख ऊँचे स्वर से बोला कि तू शुम्भ निशुम्भ के पास चल ॥ ८ ॥ आज यदि तू प्रीति-पूर्वक मेरे स्वामी के

जगादोच्चैःप्रयाहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः॥
न चेत्प्रीत्याद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति।
ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षण विह्वलाम्।९।

देव्युवाच ॥ १० ॥

दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बलसंवृतः।

पास न चलेगी तो मैं केश पकड़ कर विह्वल करता हुआ अभी ले चलूँगा ॥ ९ ॥ देवी बोली ॥ १० ॥ दैत्येश्वर ने तुझ बलवान् को सेना के साथ

भेजा है, तू बल से मुझे ले चलता है तो मैं क्या करूँ ॥ ११ ॥ ऋषि बोले ॥ १२ ॥ देवीजी के इतना कहने पर धूम्रलोचन देवी जी की ओर

बलान्नयसि मामेवन्ततः किन्ते करोम्यहम् ॥

ऋषिरुवाच ॥ १२ ॥

इत्युक्तस्सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्रलोचनः ।
हुङ्कारेणैव तम्भस्म सा चकाराम्बिका ततः १३
अथ क्रुद्धम्महासैन्यमसुराणान्तथाम्बिका ।

दौड़ा और तब देवीजी ने हुँकार मात्र से उसे भस्म कर दिया ॥ १३ ॥ तब तो असुरों की सेना बहुत क्रोधित हुई और अम्बिका ने उनपर तीक्ष्ण

बाण, शक्ति और फरशा आदि शस्त्रों की वर्षा की ॥ १४ ॥ और देवीजी का वाहन सिंह शिर हिलाता हुआ क्रोध से भयंकर शब्द करके असुरों

ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः ॥
ततो धुतसटः कोपात्कृत्वा नादं सुभैरवम् ।
पपातासुरसेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः ॥
कांश्चित्करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् ।
आक्रात्याचाधरेणान्यान्सजघानमहासुरान्

की सेना पर टूट पड़ा ॥ १५ ॥ कितने को पञ्जे से, कितने दैत्यों को मुख से और कितने बड़े बड़े असुरों को ओठ से पकड़ कर मारने लगा ॥१६॥

सिंह ने कितनों की नखों से छातियाँ फाड़ डाली और कितने का शिर हथेली के प्रहार से अलग कर दिया ॥ ७ ॥ कितने असुरों के बाहू और

केषाञ्चित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी ।
तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान्पृथक् १७
विच्छिन्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथापरे ।
पपौ च रुधिरङ्कोष्ठादन्येषान्धुतकेसरः १८
क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयन्नीतम्महात्मना ।

शिर काट गिराये और केश हिला कर कितने असुरों की छाती से रुधिर पीने लगा ॥ १८ ॥ अत्यन्त क्रोधित हो देवीजी के वाहन महात्मा सिंह

ने क्षण मात्र में सब सेनाओं का नाश कर दिया ॥ १६ ॥ तब देवीजी ने
उस असुर धूम्रलोचन को मारा और सिंह ने सब सेना नष्ट कर डाली

तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना १६
श्रुत्वा तमसुरन्देव्या निहतन्धूम्रलोचनम् ।
बलञ्च क्षयितङ्कृत्स्नदेवी केसरिणा ततः २०
चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः ।
आज्ञापयामास च तौ चण्डमुण्डौ महासुरौ ॥

यह बात सुन ॥ २० ॥ दैत्यों का स्वामी शुम्भ क्रोध कर ओठों को फड़का
कर चण्ड, मुण्ड नामक बड़े असुरों को आज्ञा दी कि ॥२१॥ हे चण्ड ! हे

मुण्ड ! तुम दोनों बहुत सी सेना साथ ले कर वहाँ जाओ और केश पकड़ कर या बाँध कर उस स्त्री को ले आओ ॥२२॥ यदि केश पकड़ने वा

हे चण्ड हे मुण्ड बलैर्बहुभिः परिवारितौ ।
तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु २२
केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि ।
तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥२३॥
तस्यां हतायान्दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते ।

बाँधने में कुछ संशय हो तो सब आयुध और असुरों के द्वारा संग्राम में उसे मार डालना ॥२३॥ उस दुष्टा (पार्वती जो अंबिका के निकलने से

शीघ्रमागम्यतांबद्ध्वागृहीत्वातामथाम्बिकाम्

काली होगई है) के मारे जाने तथा सिंह के मरने पर इस अम्बिका को उसी दशा में बाँध कर शीघ्र ले आओ ॥ २४ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये शुम्भनिशुम्भ सेनानीधूम्रलोचनवधो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ उवाच ॥ ४ ॥ ॥ श्लोकाः ॥२०॥ एवम् ॥ २४ ॥ एवमादितः ॥४१२॥

—:❀❀❀❀❀:—

सप्तमोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

ध्यायेयंरत्नपीठेशुककलपठितं शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं ।
न्यस्तैकांघ्रिं सरोजे शशिशकलधरां वल्लकींवादयन्तीम् ॥
कह्लाराबद्धमालान्नियमितविलसच्चूडिकांरक्तवस्त्रां ।
मातङ्गीं शंखपात्राम्मधुरमधुमदाञ्चित्रकोद्भासिभालाम् ॥ ७ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्डमुण्डपुरोगमाः ।

ऋषि बोले ॥ १ ॥ शुम्भ की आज्ञा पातेही चण्ड मुण्ड आदि दैत्य

चतुरंगिणी सेना के साथ अपना आयुध उठाये गये ॥२॥ जाकर देखा कि देवीजी हिमालय के एक सुवर्ण मय शिखर पर सिंह पर स्थित मन्द मन्द

चतुरङ्गबलोपेतायययुरभ्युद्यतायुधाः ॥ २ ॥
ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् ।
सिंहस्योपरि शैलेन्द्र शृङ्गे महति काञ्चने ३
ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमञ्चक्रुरुद्यताः ।
आकृष्टचापासिधरास्तथाऽन्ये तत्समीपगाः॥

मुसुकुराती बैठी हैं ॥ ३ ॥ देवीजी को इस प्रकार देख वे असुर और उनके अन्य साथी धनुष चढ़ाते हुये तलवार ले पकड़ने का यत्न करने

लगे ॥ ४ ॥ अंबिका ने उन शत्रुओं पर बड़ा क्रोध किया उस समय क्रोध के कारण देवीजी का मुख श्यामवर्ण का हो गया ॥ ५ ॥ तब भृकुटी को

ततः कोपञ्चकारोच्चैरम्बिका तानरीन्प्रति ।
कोपेन चास्या वदनम्मसीवर्णमभूत्तदा ॥ ५ ॥
भ्रूकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम् ।
काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी
विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा ।

चढ़ाने से ललाट से शीघ्र ही खड्ग और फाँसी धारण किये विचित्र खट्-वांग लिये, मुण्डों की माला से शोभित बाघंबर पहिने अत्यन्त भयंकर मुख

सूखे मांस वाली मुख खोले, जिह्वा लहलहाती भयानकरूप, भीतर घुसे लाल लाल नेत्र वाली कालीजी प्रगट हुई ॥६॥७॥८॥ और बड़े वेग से असुरों

द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसा तिभैरवा ।७।
अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा ।
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा ।८।
सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुरान् ।
सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम् ॥९॥

की सेना पर टूटीं और बड़े बड़े असुरों पर वार मारती उनकी सेनाओं को भक्षण करने लगीं ॥ ९ ॥ पृष्ठ रक्षक और अंकुशधारी योधा घण्टा

सहित हाथियों को एकही हाथ से पकड़ पकड़ कर मुख में फाकने लगीं ॥ १० ॥ इसी प्रकार घोड़ों के साथ योधाओं को और रथों के साथ

पार्ष्णिग्राहाङ्कुशग्राहीयोधघंटासमन्वितान्
समादायैकहस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ॥ १० ॥
तथैव योधन्तुरगै रथं सारथिना सह ।
निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यातिभैरवम् ॥ ११ ॥
एकञ्जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् ।

सारथियों को मुख में डाल कर भयंकर रीति से दाँतों से चबाने लगीं ॥ ११ ॥ एक का केश और दूसरे की ग्रीवा पकड़ा और तीसरे को

छाती से चौथे को पैर से दबा कर मसल डाला ॥ १२ ॥ उन असुरों ने जितने शस्त्र और महा अस्त्र फेंके उन सबों को मुख से पकड़ लिया और

पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसाऽन्यमपोथयत् ॥
तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथाऽसुरैः।
मुखेन जग्राह रुषादशनैर्मथितान्यपि॥१३॥
बलिनान्तद्बलं सर्वमसुराणान्दुरात्मनाम् ।
ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत्तथा ॥

दाँतों से मसल डाला ॥ १३ ॥ बली असुरों की सब सेनाओं को मसल डाला और अनेकों को भक्षण कर लिया और बहुतों को मारा॥१४॥ कितने

असुर तो तलवार से मारे गये कितने खट्वांग से और कितने दाँतों से मारे गये ॥ १५ ॥ असुरों की सब सेना को क्षण भर में गिरा देख चण्डा-

असिना निहताः केचित्केचित्खट्वाङ्गताडिताः
जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा ॥
क्षणेन तद्बलं सर्वमसुराणान्निपातितम् ।
दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमतिभीषणाम् ।
शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः ।

सुर उस अत्यन्त भयङ्कर काली के आगे दौड़ा ॥ १६ ॥ और महासुर ने उस भीमाक्षी देवी को अत्यन्त भयंकर बाणों की वृष्टि और असुरों के

फेंके हजारों चक्रों से छा दिया ॥ १७ ॥ काली के मुख में लगे वे अनेक चक्र ऐसे शोभायमान दीख पड़ते थे जैसे बादल में बहुत से सूर्य मंडल

छादयामास चक्रैश्चमुण्डाक्षिप्तैःसहस्रशः १७
तानिचक्राण्यनेकानिविशमानानितन्मुखम्
बभुर्यथाऽर्कबिम्बानि सुबहूनि घनोदरम्।१८
ततो जहासाऽतिरुषा भीमम्भैरवनादिनी।
कालीकरालवक्त्रान्तर्दुर्दर्शदशनोज्ज्वला १९

हों ॥ १८ ॥ वह काली घोर नाद करती हुई बड़े भयंकर रूप से हँसने लगी और अपने कराल मुख के भीतर के बड़े लम्बे दाँतों से उज्ज्वल

वर्ण दिखाने लगी ॥ १९ ॥ तब क्रोध से अपनी बड़ी तलवार को ले चण्डासुर की ओर दौड़ी और उसका केश पकड़ कर खड्ग से शिर काट

उत्थाय च महासिंहं देवी चण्डमधावत ।
गृहीत्वाचास्यकेशेषुशिरस्तेनासिनाऽच्छिनत् ॥
अथमुण्डोऽभ्यधावत्तान्दृष्ट्वाचण्ड न्निपातितम् ।
तमप्यपातयद्भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा २१
हतशेषन्ततःसैन्यन्दृष्ट्वा चण्डान्निपातितम् ।

लिया ॥ २० ॥ चंड को गिरा देख मुंडासुर देवी की ओर दौड़ा और देवीजी ने उसे भी खड्ग से काट भूमि पर गिरा दिया ॥ २१ ॥ मरने के तुल्य सेना को चंड तथा बड़े पराक्रमी मुण्ड को मरा देख भयातुर हो चारों

दिशाओं में भाग गई ॥ २२ ॥ तब काली चण्ड के शिर तथा मुण्ड को चण्डिका के पास ले जाकर बड़ा अट्टहास करके बोलीं कि ॥ २३ ॥ चंड

मुण्डञ्च सु महावीर्यन्दिशो भेजे भयातुरम् ॥
शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च।
प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ।
मयातवात्रोपहृतौ चण्डमुण्डौ महापशू ।
युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भान्निशुम्भञ्च हनिष्यसि॥
ऋषिरुवाच ॥ २५ ॥

और मुण्ड इन पशुओं को इस युद्ध में बध कर तुम्हारी भेंट करती हूँ, तुम

शुम्भ तथा निशुम्भ को स्वयं मारना ॥ २४ ॥ ऋषि बोले ॥ २५ ॥ चंड तथा मुण्ड नामके महा असुरों को लाये देख कल्याण रूप चण्डिका काली

तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्ड मुण्डौ महासुरौ ।
उवाचकालीङ्कल्याणीललितञ्चण्डिकावचः॥
यस्माच्चण्डञ्चमुण्डञ्च गृहीत्वा त्वमुपागता
चामुण्डेति ततोलोकेख्यातादेविभविष्यसि॥

जी से मधुर बचन बोली कि तुम ॥ २६ ॥ चण्ड मुण्ड को लेकर मेरे पास आई तो अतएव हे देवी ! तुम संसार में चामुण्डा के नाम से प्रसिद्ध होगी ॥ २७ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये चण्डमुण्डवधोनाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ उवाच ॥ २ ॥ श्लोकाः ॥ २५ ॥ मंत्राः ॥ २७ ॥ एवमादितः ॥ ४३६ ॥

अष्टमोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं धृतपाशांकुश मुख्यचापहस्ताम् ।
अणिमादिभिरावृतां मयूखैरहमित्येवविभावये भवानीम् ॥ ८ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते ।
बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥२॥

मेधा ऋषि बोले ॥ १ ॥ चण्ड मुण्ड के मारे जाने तथा सब सेनाओं के नाश होने पर असुरों का स्वामी ॥ २ ॥ प्रतापवान् शुम्भ ने अत्यन्त

क्रोधित हो असुरों को लड़ने की आज्ञा दिया कि आज सब प्रकार की सेनाओं के साथ (उदायुध) नामके ऊपर को शस्त्र रखने वाले ८६ और

ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भः प्रतापवान्।
उद्योगं सर्वसैन्यानान्दैत्यानामादिदेशह।३।
अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः।
कम्बूनाञ्चतुराशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः।४।
कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणाङ्कुलानि वै।

(कम्बू) नामके शङ्ख वाले ८४ दैत्य जाँय ॥ ३ ॥ ४ ॥ और कोटिवीर्य्य नामक असुरों के ५० कुल तथा धूम्रसंज्ञक असुरों के सौ कुल युद्ध के लिये

मेरी अज्ञा से जायँ ॥ ५ ॥ तथा कालक, दौहृद और मौर्य्य वंशों में उत्पन्न युद्ध के वास्ते सज कर मेरी आज्ञा से तुरंत जाँय ॥ ६ ॥ यह आज्ञा दे

शतङ्कुलानि धूम्राणान्निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ॥
कालकादौर्हृदामौर्याःकालकेयास्तथाऽसुराः
युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम ॥
इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः ।
निर्जगाम महासैन्य सहस्रैर्बहुभिर्वृतः ॥७॥

भयकर शासनवाला असुरपति शुम्भ बड़ी बड़ी सहस्रों सेनाओं को लेकर निकला ॥ ७ ॥ तब चण्डिका ने अति भयंकर सेनाओं को आते देख धनुष

के टंकार से पृथ्वी तथा आकाश को पूरित कर दिया ॥ ८ ॥ हे नृप तब सिंह ने उस समय अत्यन्त घोर शब्द किया और अम्बिकाजी ने उन

आयान्तञ्चण्डिकादृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणम्
ज्यास्वनैः पूरयामास धरणी गगनान्तरम् ।८।
ततः सिंहोमहानादमतीव कृतवान्नृप ।
घण्टास्वनेन तन्नादमम्बिका चोपवृंहयत् ।९।
धनुर्ज्यासिंहघण्टाना न्नादापूरितदिङ्मुखा ।

शब्दों को अपने घंटे के शब्द से अधिक बढ़ाया ॥ ९ ॥ धनुष के टंकार ध्वनि से और सिंह तथा घण्टों के नाद से दिशाओं के मुख भर गये

और काली जी ने अपना मुख फैला कर बड़े भयंकर नाद से जय जय शब्द किया ॥ १० ॥ उस शब्द को सुन दैत्यों की सेना ने क्रोध से चारों

निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारितानना ॥
तन्निनादमुपश्रुत्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम् ।
देवी सिंहस्तथा काली सरोषैः परिवारिता: ११
एतस्मिन्नन्तरे भूप विनाशाय सुरद्विषाम् ।
भवायामरसिंहानामतिवीर्यबलान्विता: १२

दिशाओं से अंबिका देवी को सिंह तथा काली को घेर लिया ॥ ११ ॥ हे राजन् ! इस समय असुरों को मारने तथा देवताओं के कल्याण के अर्थ अत्यन्त वीर्य और बलयुक्त ॥ १२ ॥ ब्रह्मा शिव स्वामिकार्तिक विष्णु

और इन्द्र की शक्तियाँ इनके शरीर से निकल कर उन देवताओं के समान रूप धारण कर चण्डिका के पास गईं ॥ १३ ॥ जिस देवता का जैसा रूप

ब्रह्मेशगुहविष्णूनान्तथेन्द्रस्य च शक्तयः ।
शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां ययुः ॥
यस्य देवस्य यद्रूपं यथा भूषणवाहनम् ।
तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान्योद्धुमाययौ १४
हंस युक्तविमानाग्रे साक्षसूत्रकमण्डलुः ।

और भूषण वाहन है वैसे ही शक्तियाँ भी स्वरूप और भूषण वाहन के साथ असुर से लड़ने को आईं ॥ १४ ॥ हंस युक्त विमान पर बैठे हाथ में अक्षमाला तथा कमण्डलु लिये ब्रह्मा की शक्ति आई। जो ब्रह्माणी

नाम से प्रसिद्ध हुई ॥ १५ ॥ बैल पर सवार उत्तम त्रिशूल धारण किये चन्द्र रेखा से शोभित बड़े बड़े सर्पों के कङ्कण पहिरे माहेश्वरी (शिव

आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते ॥
माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणि ।
महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखाविभूषणा १६
कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना ।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुहरूपिणी

की शक्ति) आई ॥१६॥ स्वामिकार्तिक के स्वरूप वाली कौमारी, शक्ति को हाथ में धारण किये सुन्दर मयूर पर सवार दैत्यों से युद्ध करने आई ॥१७॥

१७

गरुड़ पर सवार शंख चक्र गदा धनुष और खड्ग हाथों में लिये वैष्णवी (विष्णु की शक्ति) आई ॥ १८ ॥ वाराहरूप धारण कर महावाराह के

तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि संस्थिता ।
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्ग हस्ताभ्युपाययौ ॥
यज्ञवाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो हरेः ।
शक्तिःसाप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रती तनुम्
नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशंवपुः ।

अतुलरूप को धारण करने वाली विष्णु की शक्ति भी आई ॥ १९ ॥ नारसिंही नृसिंह के समान शरीर धारण कर आई जिसके सटा के हिलाने से

नक्षत्रों की पंक्ति छितराय गई ॥ २० ॥ सहस्र नक्षत्रों से शोभित, ठीक इन्द्र का स्वरूप धारण किये वज्र हाथ में लेकर हाथी पर सवार हो इन्द्र

प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्त नक्षत्र संहतिः २०

वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरिस्थिता ।

प्राप्तासहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा २१

ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः ।

हन्यन्तामसुराःशीघ्रंममप्रीत्याहचण्डिकाम्

की शक्ति आई ॥ २१ ॥ इन देवताओं की शक्तियों से युक्त महादेवजी ने चण्डिका से कहा कि तुम मेरी इच्छा से शीघ्र इन असुरों को मारो ॥ २२ ॥

इसके पश्चात् देवी के शरीर से अत्यन्त भयङ्कर और अति उग्र १०० शिवाओं के समान नाद करने वाली चण्डिका शक्ति निकली ॥ २३ ॥ उस अपराजिता देवी ने धूम्रवर्ण की जटा धारण किये महादेवजी से कहा कि हे

ततो देवी शरीरात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा
चण्डिका शक्तिरत्युग्रा शिवाशतनिनादिनी
स चाह धूम्रजटिलमीशानमपराजिता ।
दूतत्वङ्गच्छ भगवन्पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः
ब्रूहि शुम्भन्निशुम्भञ्च दानवावतिगर्वितौ ।

भगवान् ! आप शुम्भ निशुम्भ के पास मेरी ओर से दूत होकर जाइये ॥२४॥ और अत्यन्त गर्वित होकर जो शुम्भ और निशुम्भ और अन्यान्य

दानव युद्ध के लिये उपस्थित हैं उनसे कहिये कि ॥ २५ ॥ यदि तुम जीने की इच्छा रखते हो तो इन्द्र त्रिलोक का राज्य पावे, देवता यज्ञ के भागी

ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥
त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतान्देवाःसन्तु हविर्भुजः
यूयम्प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ २६
बलावलेपादथ चेद्भवन्तो युद्धकाङ्क्षिणः ।
तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाःपिशितेनवः ॥

हों तुम सब पाताल को चले जाओ ॥ २६ ॥ और यदि तुम बल के अहंकार से युद्ध की इच्छा रखते हो तो आओ तुम्हारे माँस से मेरी सब स्यारिने

तृप्ति पावे ॥ २७॥ देवीजी ने दूत कार्य्य पर स्वयं शिवजी को नियत किया अतएव शिवदूती के नाम से प्रसिद्ध हुई ॥ २८॥ और वे महा असुर भी

यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम्
शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता
तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वाख्यातं महासुराः
अमर्षापूरिता जग्मुर्यतः कात्यायनी स्थिता
ततः प्रथममेवाग्रे शरशक्त्यृष्टिवृष्टिभिः ।

महादेवजी से कही देवीजी की बातों को सुन क्रोधयुक्त हो जहाँ कात्यायनी थीं वहाँ गये ॥२९॥ तदनन्तर क्रोधित असुर पहिले देवीजी के आगे

शर शक्ति बाण आदि की वर्षा करने लगे ॥ ३० ॥ जो बाण शूल चक्र और फरसे असुरों ने फेंके थे उन्हें धनुष खींचकर छोड़े हुए बड़े बड़े बाणों

ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः ॥३०॥
साचतान्प्रहितान्बाणाञ्छूलशक्तिपरश्वधान्
चिच्छेद लीलयाध्मातधनुर्मुक्तैर्महेषुभिः ॥
तस्याग्रतस्तथा काली शूलपातविदारितान् ।
खट्वाङ्गपोथितांश्चारीन्कुर्वती व्यचरत्तदा ३२

से काट गिराये ॥ ३१ ॥ और देवीजी के आगे काली शत्रुओं को त्रिशूल से चीरती तथा खट्वांग से कुचलती हुई इधर उधर फिरने लगी ॥ ३२ ॥

ब्राह्मणी जिधर जिधर जाती थी उधर उधर शत्रुओं पर कमंडलु का जल छिड़क उन्हें हतवीर्य तथा निर्बल करने लगी ॥ ३३ ॥ माहेश्वरी ने

कमण्डलुजलाक्षेपहतवीर्यान्हतौजसः ।
ब्रह्माणीचाकरोच्छत्रून्येन येनस्म धावती ॥
माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी ।
दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्यातिकोपना
ऐन्द्रीकुलिशपातेन शतशोदैत्यदानवाः ।

त्रिशूल से वैष्णवी ने चक्र से और अत्यन्त क्रोधित कौमारी ने शक्ति से दैत्यों को मारा ॥ ३४ ॥ ऐन्द्री ने बज्र के प्रहार से सैकड़ों दैत्य दानवों

को मारा जिससे वे रक्त प्रवाह बरसाते पृथ्वी पर लोट गये ॥ ३५ ॥
वाराही शक्ति तुंड प्रहार से विध्वस्त और दंष्ट्रा के आगे के भाग से
जिनके वक्षस्थल फट गये और चक्र से छिदे भये दैत्य गिरने लगे ॥ ३६ ॥

पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः ३५
तुण्डप्रहारविध्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः ।
वराहमूर्त्यान्यपतंश्चक्रेण च विदारिताः ३६
नखैर्विदारितांश्चान्यान्भक्षयन्ती महासुरान्
नारसिंही चचाराजौ नादापूर्णदिगम्बरा ३७

नारसिंही देवी नखों से फाड़े हुए अन्य बड़े बड़े असुरों का भक्षण करती
नाद से दिशा तथा आकाश को पूरित करती संग्राम में घूमने लगी ॥३७॥

शिवदूती के भयङ्कर अट्टहास से तिरस्कृत असुर पृथ्वी पर गिरने लगे और उन्हें चण्डिका भक्षण करने लगी ॥ ३८ ॥ इस प्रकार देवियों

चण्डाट्टहासैरसुराः शिवदूत्यभिदूषिताः।
पेतुःपृथिव्याम्पतितांस्तांश्चखादाथ सा तदा
इतिमातृगणङ् क्रुद्धं म्मर्दयन्त म्महासुरान्।
दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ३६
पलायनपरान्दृष्ट्वा दैत्यान्मातृगणार्दितान्।

का क्रोधित गण अनेक प्रकार के असुरों को मसल कर दैत्यों की सेना नष्ट करदी ॥ ३६ ॥ तब देवी के गणों से पीड़ित दैत्यों को भागता

देख रक्तबीज नाम का असुर क्रोध कर लड़ने आया ॥ ४० ॥ इसके देह से रुधिर बिन्दु जब पृथ्वी पर गिरता था तब उसके समान असुर पृथ्वी

योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्तबीजो महासुरः ॥
रक्तविन्दुर्यदाभूमौ पतत्यस्य शरीरतः ।
समुत्पततिमेदिन्यान्तत्प्रमाणोमहासुरः ४१
युयुधे सगदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः ।
तत्रश्चैन्द्री स्ववज्रेण रक्तवीजमताडयत् ४२

से उत्पन्न हो जाता था ॥ १ ॥ यह महा असुर हाथ में गदा ले ऐन्द्री (इन्द्र की शक्ति) से युद्ध करने लगा तब ऐन्द्री के वज्र से रक्तबीज को

मारा ॥ ४२ ॥ बज्र के चोट से उसके शरीर से बहुत सा लोहू निकला जिससे उसी रूप के समान और पराक्रमी योधा उत्पन्न हो गये ॥ ४३ ॥

कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम् ।
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः॥
यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः ।
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः ॥
ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसम्भवाः ।

उसके शरीर से जितने रक्त बिन्दु गिरे उतने ही पुरुष उसके समान बल वीर्य और पराक्रम वाले उत्पन्न भये ॥ ४४ ॥ रक्त से उत्पन्न वे पुरुष

भी वहाँ देवियों के साथ उग्र शस्त्र बरसाते भयंकर रीति से युद्ध करने
लगे ॥ ४५ ॥ फिर वज्र पात से इसका शिर कट गया और लोहू वहा
तो उससे सहस्त्रों पुरुष उत्पन्न होगये यहाँ (ववाह " के जगह "उवाह"

सम्मातृभिरत्युग्रशास्त्रपातातिभीषणम् ४५
पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य शिरो यदा ।
ववाह रक्तम्पुरुषास्ततो जातास्सहस्रशः ४६
वैष्णवीसमरेचैनञ् चक्रेणाभिजघानह ।

की शंका है, उत्तर, पुराण पञ्चम वेद है वेदमें पाणिनि के प्रयोग से कहीं
कहीं भिन्न प्रयोग दृष्टि गोचर होता है "यथा नमः शंभवाय आदि) ॥४६॥
वैष्णवी ने इस समर में चक्र से काटा और ऐन्द्री ने इस असुरेश्वर को

गदा से ताड़न किया ॥४७॥ वैष्णवी के चक्र से कटने के कारण उस असुर का रुधिर बहने से उत्पन्न हुए उसके समान सहस्रों बड़े बड़े असुरों से

गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ४७
वैष्णवी चक्रभिन्नस्य रुधिरस्रावसम्भवैः ।
सहस्रशो जगद्व्याप्तन्तत्प्रमाणैर्महासुरैः ४८
शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना
माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजम्महासुरम् ४९

जगत् व्याप्त हो गया ॥ ४८ ॥ कौमारी ने शक्ति से वाराही ने तलवार से और माहेश्वरी ने त्रिशूल से उस महासुररक्तबीज को मारा ॥ ४९ ॥ उस

महासुररक्तबीज ने क्रोधित हो सब देवियों को पृथक् पृथक् मारा ॥५०॥
शक्ति शूल आदि अनेक शस्त्रोंसे मारे हुए उस असुर के लोहू की जो

स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत्पृथक् ।
मातृः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः ॥
तस्याहतस्य बहुधा शक्तिशूलादिभिर्भुवि ।
पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः ॥
तैश्चासुरासृक्सम्भूतैरसुरैस्सकलञ्जगत् ।

धारा पृथ्वी पर बही उससे सैकड़ों असुर उत्पन्न होगये ॥ ५१ ॥ उस
असुर के रुधिर से उत्पन्न हुये असुरों से सम्पूर्ण जगत् व्याप्त हो गया

इससे देवताओं को बड़ा भय हुआ ॥ ५२ ॥ भययुत देवताओं को देख संग्राम में चण्डिका काली से बोली कि हे चामुण्डे ! अपना मुख फैला लो।

व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् ॥
तान्विषण्णान्सुरान्दृष्ट्वा चण्डिका प्राहसत्वरा।
उवाच कालीञ्चामुण्डे विस्तीर्णं वदनङ्कुरु।
मच्छस्त्रपातसंभूतान् रक्तविन्दून्महासुरान्
रक्तबिन्दोः प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिना ॥

॥ ५३ ॥ और मेरे शस्त्राघात से उत्पन्न रक्त विन्दू और रक्त बिन्दुओं से उत्पन्न असुरों को मुख से शीघ्र ग्रहण करो ॥ ५४ ॥ उससे उत्पन्न महा-

सुरों को भक्षण करती रण में विचरती रहो। इस दैत्य का रुधिर क्षीण हो जायगा तब यह नष्ट होजायगा॥५५॥ तुम अत्यन्त तेज वाली हो तुम्हारे खाते

भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान्महासुरान्।
एवमेष क्षयन्दैत्यः क्षीणरक्तो गमिष्यति ५५
भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे
इत्युक्त्वा तान्ततो देवी शूलेनाभिजघान तम्
मुखेन काली जगृहे रक्तबीजस्य शोणितम्।

रहने से असुर पैदा न होगें ऐसा कह देवीजी ने रक्तबीज को त्रिशूल से घायल किया॥ ५६॥ और कालीजी ने उसके लोहू को अपने मुख में

लिया तब दैत्य चंडिका को युद्ध में गदा से ताड़ित करने लगा ॥ ५७ ॥
गदाघात से देवीजी को कुछ भी न हुआ और उस घायल असुर के

ततो सावाजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् ॥
न चास्या वेदनां चक्रे गदापातोऽल्पिकामपि
तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम् ॥
यतस्ततस्तद्वक्त्रेण चामुण्डा सम्प्रतीच्छति ।
मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महासुराः

शरीर से बहुत लोहू बहने लगा ॥ ५८॥ चामुण्डा ने उस रुधिर को चारों
ओर से पीने की इच्छा की इसके मुख में से लोहू के गिरने से उत्पन्न हुये

दैत्यों को ॥ ५९ ॥ चामुण्डा ने भक्षण किया और रक्त पी लिया, देवी जी ने शूल, वज्र बाण, तलवार तथा ऋष्टि से ॥ ६० ॥ उस रक्तबीज को

तांश्चखादाथ चामुण्डा पपौतस्य च शोणितम्
देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः ६०
जघान रक्तबीजन्त च्चामुण्डा पीतशोणितम्।
स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसङ्घसमाहतः ॥६१॥
नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजो महासुरः।

जिसका रक्त चामुण्डा ने पी लिया था मार डाला वह शस्त्रों के समूह से मरा हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥ ६१ ॥ हे राजन् ! जब रक्तबीज

महासुर रुधिर हीन हुआ तब देवता अत्यन्त प्रसन्न हुये ॥६२॥ और उनसे

ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशान्नृप ॥६२॥
तेषांमातृगणो जातो ननर्तासृङ्मदोद्धतः ।

उत्पन्न देवियों के गण लोहू पी पीकर मदसे उद्धत हो नाचने लगे ॥ ६३ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये रक्तबीज
वधो नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ उवाच ॥ १ ॥ अर्ध ॥ १ ॥
श्लोकाः ॥ ६१ ॥ एवं ॥ ६३॥ एवमादितः ॥५०२॥

—:❀❀❀:—

नवमोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

बन्धूककाञ्चननिभां रुचिराक्षमालां ।
पाशांकुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः ॥
बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणां त्रिनेत्रा-
मर्द्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ॥ ६ ॥

राजोवाच ॥ १ ॥

विचित्रमिदमाख्यात म्भगवन्भवता मम ।

राजा बोले ॥ १ ॥ हे भगवन् ! मुझे आपने रक्तबीज के बध की

विचित्र कथा और देवीजी का चरित्र तथा माहात्म्य सुनाया ॥ २ ॥ पर
यह सुनने की इच्छा है कि रक्तबीज के मारे जाने पर शुम्भ तथा निशुम्भ

देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजवधाश्रितम् ॥
भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते ।
चकार शुंभो यत्कर्म निशुम्भश्चातिकोपनः ३

ऋषिरुवाच ॥ ४ ॥

चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपातिते ।

ने अत्यन्त कोप करके क्या किया ॥ ३ ॥ ऋषि बोले ॥ ४ ॥ जब रक्तबीज
तथा और भी असुर संग्राम में मारे गये तब शुम्भ और निशुम्भ ने बहुत

क्रोध किया ॥ ५ ॥ और महासेना को मरा देख क्रोध कर असुरों की मुख्य सेना को साथ लेकर निशुम्भ दौड़ा ॥६॥ और आगे पीछे दोनों ओर

शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ५
हन्यमानम्महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् ।
अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययाऽसुरसेनया ॥
तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः ।
सन्दष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धाहन्तु न्देवीमुपाययुः ॥७॥

बड़े बड़े असुर अपने ओठों को चबाते भये क्रोधकर देवी जी को मारने आये ॥ ७ ॥ और बड़ा पराक्रमी शुम्भ भी अपनी सेना को साथ ले

क्रोध से चंडिका को मारने और देबियों से युद्ध के निमित्त आया ॥ ८ ॥
देवीजी के साथ शुम्भ निशुम्भ का घोर युद्ध होने लगा और वर्षा के

आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः।
निहन्तुञ्चण्डिकाङ्कोपात्कृत्वा युद्धंतुमातृभिः
ततो युद्धमतीवासीद्देव्याः शुम्भनिशुम्भयोः।
शरवर्षमतीवोग्रम्मेघयोरिव वर्षतोः ॥ ९ ॥
चिच्छेदास्ताञ्छरांस्ताभ्याञ्चण्डिकास्वशरोत्करैः

तुल्य अत्यन्त तेज बाणों की वर्षा होने लगी ॥ ९ ॥ चण्डिका ने अपने
बाणों से उन दोनों के फेंके हुए बाणों को काट डाला और दोनों के अंगों

में शस्त्रों के समूह से ताड़ित करने लगी ॥ १० ॥ और निशुम्भ ने पैनी तलवार से चमकती ढाल ले देवीजी के उत्तम वाहन सिंह के शिर में

ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ १०
निशुम्भो निशितङ्खङ्गञ्चर्म चादाय सुप्रभम् ।
अताडयन्मूर्ध्नि सिंहन्देव्या वाहनमुत्तमम्॥
ताडिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम् ।
निशुम्भस्याशुचिच्छेदचर्मचाप्यष्टचन्द्रकम्

मारा ॥ ११ ॥ वाहन के ताड़ित होने पर देवीजी ने क्षुरप्रेणानाम उत्तम शस्त्र से निशुम्भ के उत्तम तलवार तथा अष्टचन्द्र नामक ढाल को शीघ्र

ही काट डाला ॥ १२ ॥ ढाल तथा तलवार के कटने पर उस असुर ने शक्ति फेंकी और देवीजी ने सामने आई उस शक्ति को भी चक्र से दो

छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः ।
तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभिमुखागताम्
कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलञ्जग्राह दानवः
आयान्तम्मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ॥
आविद्ध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकाम्प्रति

खण्ड कर दिया ॥ १३ ॥ तब शुम्भासुर ने क्रोध करके शूल लिया पर देवीजी ने उसे भी मुष्टिपात से चूर चूर कर दिया ॥१४॥ फिर उसने भी

गदा को घुमा कर देवीजी की ओर फेंका पर वह देवीजी के त्रिशूल से टूट कर भस्म हो गया ॥ १५ ॥ और हाथ में फरसा लेकर आते हुए उस दैत्येश्वर को देवीजीने बाणों के समूह से घायल कर पृथ्वी पर गिरा

सापि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता
ततः परशुहस्त न्तमायान्त न्दैत्यपुङ्गवम् ।
आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भूतले ॥ १६ ॥
तस्मिन्निपतिते भूमौ निशुंभे भीमविक्रमे ।
भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥

दिया ॥ १६ ॥ भयंकर पराक्रम वाले निशुम्भ के गिरने पर उसका भाई शुम्भ अत्यन्त क्रोध कर अम्बिका को मारने दौड़ा ॥ १७ ॥ और बड़े बड़े

आयुधों को ले अत्यन्त लम्बी अतुल पराक्रमी आठ भुजाओं के साथ वह रथ में बैठ सम्पूर्ण मेघ मण्डल में व्याप्त दीखने लगा ॥ १८ ॥ उसे

सरथस्थस्तथाऽत्युच्चै गृंहीतपरमायुधैः ।
भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषम्बभौ नभः १८
तमायान्तं समालोक्य देवी शङ्खमवादयत् ।
ज्याशब्दञ्चापि धनुषश्चकारातीव दुस्सहम् ॥
पूरयामास ककुभो निजघण्टास्वनेन च ।

आया हुआ देख देवीजी ने शंख बजाया और अत्यन्त दुःसह धनुष की प्रत्यंचा का टंकार शब्द किया ॥ १९ ॥ और सब दैत्यों की सेनाओं के

तेज को हरने वाले घण्टे से दिशाओं को भर दिया ॥ २० ॥ तब बड़े बड़े हाथियों के महाभद को दूर करने वाले सिंह ने अपने घोर नाद से पृथ्वी आकाश तथा दशों दिशाओं को पूरित कर दिया ॥ २१ ॥ फिर कालीजी

समस्तदैत्यसैन्यानान्तेजोवधविधायिना ॥
ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेभमहामदैः ।
पूरयामास गगनङ्गान्तथैव दिशोदश ।२१।
ततःकालीसमुत्पत्य गगनङ्क्ष्मामताडयत ।
कराभ्यान्तन्निनादेनप्राक्स्वनास्तेतिरोहिताः

ने आकाश में उछल और फिर उतर कर दोनों हाथ पृथ्वीपर दे मारा जिस नाद से पहिले के शब्द छिप गये ॥ २२ ॥ तब शिवदूती ने घोर

अट्टहास किया । उन शब्दों से असुर लोग डर गये और शुम्भ ने बड़ा क्रोध किया ॥ २३ ॥ अरे दुष्टात्मा खड़ा रह ऐसा जब अंबिका ने कहा

अट्टाट्टहासमशिवं शिवदूती चकारह ।
तैःशब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भः कोपम्परं ययौ २३
दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठति व्याजहाराम्बिका यदा।
तदा जयेत्यभिहितन्देवैराकाशसंस्थितैः २४
शुम्भेनागत्ययाशक्तिर्मुक्ताज्वालातिभीषणा

तब आकाश में स्थित देवताओं ने जय जय शब्द कहा ॥ २४ ॥ और देवीजी ने अग्नि के पर्वत के समान शुम्भ से आई हुई शक्ति को

महोल्का नाम की अपनी शक्ति से काट दिया ॥ २५ ॥ सिंह के समान शुम्भ के महानाद से तीनों लोक व्याप्त हो गये तब हे राजन् ! आकाश से उत्पन्न निर्घात के घोर शब्द ने शुम्भ के नाद को जीत लिया ॥ २६ ॥

आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया।
सिंहनादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम्।
निर्घातनिःस्वनो घोरो जितवानवनीपते २६

शुम्भमुक्ताञ्छरान्देवी शुम्भस्तत्प्रहिताञ्छरान्
चिच्छेदस्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः २७

और देवीजी ने शुम्भ के छोड़े बाणों को और शुम्भ ने देवीजी के छोड़े बाणों को परस्पर अपने अपने सैकड़ों हजारों बाणों से काट डाला ॥२७॥

तब चण्डिका ने क्रोध करके शुम्भ को त्रिशूल से मारा उस समय वह घायल होकर मूर्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥ २८ ॥ और निशुम्भ

ततःसा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघानतम्।
स तदानिहतो भूमौ मूर्च्छितोनिपपातह २८
ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः।
आजघान शरैर्देवीङ्कालीङ्केसरिणन्तथा २९
पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतन्दनुजेश्वरः।

सचेत हो धनुष लेकर आया और देवी कालीजी तथा सिंह को घायल किया ॥ २९ ॥ पश्चात् उस असुरेश्वर ने दश हजार बाहु धारण कर

चक्रायुध से देवीजी को आच्छादित किया ॥ ३० ॥ और संकटनाशिनी दुर्गा भगवती ने क्रोध किया और बाणों से उन चक्रों तथा बाणों को

चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम्
ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी।
चिच्छेदतानिचक्राणिस्वशरैःसायकांश्चतान्
ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम्।
अभ्यधावतवैहन्तुन्दैत्यसेनासमावृत :३२।

काट दिया ॥ ३१ ॥ तब निशुम्भ बेग से अपनी गदा ले दैत्यों की सेना सहित देवीजी को मारने दौड़ा ॥ ३२ ॥ और देवीजी ने अपनी तीक्ष्ण

धारवाली तलवार से उस फेंकी हुई गदा को काट डाला तब उस असुर ने त्रिशूल लिया ॥ ३३ ॥ त्रिशूल हाथ में लिये आते उस दैत्य निशुम्भ

तस्यापतत एवाशु गदाञ्चिच्छेद चण्डिका।
खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे ॥३३॥
शूलहस्तं समायान्तन्निशुम्भममरार्दनम्।
हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका ॥
भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः।

के हृदय को चण्डिका देवी ने बेग से बेधने वाले शूल से बेध डाला ॥ ३४ ॥ त्रिशूल से बिधे उस दैत्य के हृदय से एक दूसरा महाबली

तथा पराक्रमी पुरुष चंडिका से "ठहर यह शब्द कहता भया निकला" ॥ ३५ ॥ देवीजी ने जोर से हँसकर उस बाहर निकले असुर का शिर तलवार से काट लिया और वह पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥ ३६ ॥ और सिंह

महाबलो महावीर्यस्तिष्ठेति पुरुषोऽवदन् ३५

तस्य निष्क्रामतोदेवी प्रहस्य स्वनवत्ततः ।

शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद्भुवि ।३६।

ततः सिंहश्चखादोग्रदंष्ट्रा क्षुण्णशिरोधरान् ।

असुरां स्तांस्तथा काली शिवदूती तथापरान्।

उन असुरों के शिर ओठों को अपने तीक्ष्ण दाँतों से चोंथ चोंथ कर खाने लगा और काली तथा शिवदूती अन्य असुरों को खाने लगीं

॥ ३७ ॥ कितने असुर कौमारी की शक्ति से कट कर मर गये कितने ब्रह्माणी के अभिमंत्रित पवित्र जल से निकाल दिये गये ॥ ३८ ॥

कौमारीशक्तिनिर्भिन्नाःकेचिन्नेशुर्महासुराः।
ब्रह्माणीमन्त्रपूतेन तोयेनान्ये निराकृताः ३८।
माहेश्वरी त्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथापरे ।
वाराहीतुण्डघातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि ॥
खण्डंखण्डञ्च चक्रेण वैष्णव्या दानवाःकृताः

कितने माहेश्वरी के त्रिशूल से कट कर गिर पड़े और कितने वाराही के मुख प्रहार से पृथ्वी पर चूर्ण चूर्ण होगये ॥ ३९ ॥ वैष्णवी ने चक्र से

दानवों को टुकड़े टुकड़े कर दिया और कितने दूसरों को ऐन्द्री ने अपने हाथ के अग्रभाग से फेंके वज्र से नष्ट कर दिया ॥ ४० ॥ कितने मर गये,

वज्रेण चैन्द्री हस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे ॥४०॥
केचिद्विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् ।
भक्षिताश्चापरे काली शिवदूती मृगाधिपैः ॥

कितने घोर संग्राम में नष्ट हुये और कितने शेषों को (बचे हुए को) काली, शिवदूती और सिंह ने खाया ॥ ४१ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः ९ उवाच ॥२॥ श्लोकाः॥३९॥ एवम् ॥४१॥ एवमादितः ॥५४३॥

दशमोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

उत्तप्तहेमरुचिरां रविचन्द्रवह्नि-
नेत्रांधनुश्शरयुतांकुशपाशशूलम् ॥
रम्यैर्भुजैश्चदधतीं शिवशक्ति रूपां-
कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दु लेखाम् ॥ १० ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

निशुम्भान्निहतन्दृष्ट्वा भ्रातरम्प्राणसंमितम्
हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ॥

ऋषि बोले ॥ १ ॥ प्राण के समान अपने भाई निशुम्भ और सेना को

मरा देख शुम्भ बोला ॥ २ ॥ हे दुष्टे हे दुर्गे ! तू बल के अहंकार से गर्व न कर तू औरों के बल के आश्रय से मानवती हो कर लड़ती है ॥ ३ ॥

बलावलेपाद्दुष्टे त्वम्मा दुर्गे गर्वमावह ।
अन्यासां बलमाश्रित्य युद्धचसे याऽतिमानिनी

देव्युवाच ॥ ४ ॥

एकैवाहञ्जगत्यत्र द्वितीयाकाममापरा ।
पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः ।५।

देवी बोली ॥ ४ ॥ इस जगत में मैं एकही हूँ मेरे से दूसरा कौन है ये सब मेरी शक्तियाँ हैं देख मुझमें ही लय हुई जाती हैं ॥ ५ ॥ तब

ब्रह्माणी आदि सब शक्तियाँ देवीजी के शरीर में लय हो गईं और केवल एक अम्बिका रह गई ॥ ६ ॥ देवी बोली ॥ ७ ॥ अपनी शक्ति से मैं

ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखालयम्।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत्तदाम्बिका

देव्युवाच ॥ ७ ॥

अहं विभूत्या बहुभिरिहरूपैर्यदास्थिता ।
तत्संहृतम्मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरोभव ॥

अनेक रूपों में यहाँ खड़ी थी उन सब रूपों को खींच कर अब अकेली स्थित हूँ तू संग्राम में स्थिर हो ॥ ८ ॥ ऋषि बोले ॥ ९ ॥ कि सब

देवता और असुरों के देखते ही देखते देवीजी और शुम्भ इन दोनों में घोर युद्ध होने लगा ॥ १० ॥ शरों की वर्षा, तीक्ष्ण शस्त्र तथा दारुण

ऋषिरुवाच ॥ ६ ॥

ततः प्रववृते युद्धन्देव्याः शुम्भस्य चोभयोः।
पश्यतां सर्वदेवानामसुराणांचदारुणम्।१०॥
शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैवदारुणैः ।
तयोर्युद्धमभूद्भूयः सर्वलोकभयङ्करम् ११॥

अस्त्रों से सम्पूर्ण लोक को भय उत्पन्न करने वाला उन दोनों का पुनः युद्ध हुआ ॥ ११ ॥ अम्बिका ने जो सैकड़ों दिव्य अस्त्र फेंके थे उन

सबों को उस दैत्येन्द्र ने काटने वाले शस्त्रों से काट डाला ॥ १२ ॥ और उस असुर ने जो दिव्य शस्त्र फेंके थे उनको लीला पूर्वक हुंकार शब्द

दिव्यान्यस्त्राणिशतशोमुमुचेयान्यथाम्बिका
बभञ्जतानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघात कर्तृभिः ॥
मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी ।
बभञ्ज लीलयैवोग्रहुङ्कारोच्चारणादिभिः १३
तत श्शारशतैर्देवी माच्छादयत सोऽसुरः ।

से देवीजी ने तोड़ दिया ॥ १३ ॥ तब उस असुर ने सैकड़ों बाणों से देवीजी को ढाँक दिया और देवीजी ने भी क्रोध करके अपने बाणों से

असुर का धनुष काट डाला ॥ १४ ॥ जब धनुष कट कर गिर पड़ा तब उस दैत्येन्द्र ने शक्ति ली, देवीजी ने उसके हाथ के उस शक्ति को भी

साऽपि तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः॥
छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे।
चिच्छेददेवीचक्रेणतामप्यस्यकरेस्थिताम् ॥
ततः खड्गमुपादाय शतचन्द्रञ्च भानुमत् ।
अभ्यधावत्तदा देवीन्दैत्यानामधिपेश्वरः ॥

काट दिया ॥ १५ ॥ तब दैत्यों का स्वामी चमकती तलवार और ढाल लेकर देवीजी के सम्मुख दौड़ा ॥ १६ ॥ उसके आते ही चण्डिका ने

खड्ग को काट दिया और धनुष से फेंके तीक्ष्ण बाणों से सूर्य की किरण के समान सुन्दर ढाल को काट दिया ॥ १७ ॥ जब उस दैत्याधिपति का

तस्यापतत एवाशु खड्गञ्चिच्छेद चण्डिका।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम् १७
हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः।
जग्राह मुद्गरङ्घोरमम्बिकानिधनोद्यतः १८
चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरन्निशितैः शरैः।

घोड़ा मर गया धनुष टूट गया और सारथी मारा गया तब वह घोर मुद्गर ले अम्बिका को मारने को तैयार हुआ॥ १८ ॥ देवीजी के सम्मुख आये उस असुर के मुद्गर को तेज बाणों से काट दिया तो भी वह

असुर मुक्का उठा कर देवीजी की ओर बड़े वेग से दौड़ा ॥ १९ ॥ उस दैत्येश्वर ने देवीजी के हृदय में मुक्का मारा और देवीजी ने भी उसकी

तथापि सोऽभ्यधावत्ताम्मुष्टिमुद्यम्य वेगवान्
स मुष्टिम्पातयामास हृदयेदैत्यपुंगवः ।
देव्यास्तञ्चापि सा देवीतलेनोरस्यताडयत् ॥
तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले ।
स दैत्यराजःसहसा पुनरेव तथोत्थितः २१

छाती में थप्पड़ मारा ॥ २० ॥ थप्पड़ से चोट खाकर वह दैत्यराज पृथ्वी पर गिर पड़ा और पुनः उठ खड़ा हुआ ॥ २१ ॥ और देवीजी को पकड़

उछल कर आकाश में जा खड़ा हुआ, वहाँ भी चण्डिका ने उसके साथ निराधार होकर युद्ध किया ॥ २२॥ दैत्य ने और चण्डिका ने आकाश में

उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीङ्गगनमास्थितः ।
तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका २२
नियुद्धङ्खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् ।
चक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविस्मयकारकम् २३
ततो नियुद्धं सुचिरङ्कृत्वा तेनाम्बिका सह ।

सिद्ध, मुनियों को भी आश्चर्य जनक यह प्रथम युद्ध किया ॥ ३॥ उसने अम्बिका के साथ बहुत दिन तक युद्ध किया तब अम्बिका ने उसे ऊपर को

घुमाया और पृथ्वी पर फेंक दिया ॥ २४ ॥ पृथ्वी पर गिरने के पश्चात् वह दुष्ट बेग से मुट्ठी सँभाल कर चण्डिका को मारने की इच्छा से दौड़ा

उत्पाट्य भ्रामयामास चिक्षेपधरणीतले ॥
स क्षिप्तो धरणीम्प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगवान्।
अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिकानिधनेच्छया।
तमायान्तन्ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम् ।
जगत्याम्पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि॥

॥ २५ ॥ सब दैत्यों के अधिपति को आते देख देवीजी ने त्रिशुल से छाती में बेधकर पृथ्वी पर दैत्यराज को गिरा दिया ॥ २६ ॥ वह देवीजी

के त्रिशूल के अग्रभाग से घायल प्राण रहित हो सम्पूर्ण पृथ्वी के समुद्र द्वीप और पर्वतों को कँपाता जमीन में गिर पड़ा ॥ २७ ॥ उस दुष्टात्मा

स गतासुः पपातोर्व्यान्देवीशूलाग्रविक्षतः ।
चालयन्सकलाम्पृथ्वीं साब्धिद्वीपांसपर्वताम्
ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन्दुरात्मनि ।
जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलञ्चाभवन्नभः॥
उत्पातमेघाःसोल्का ये प्रागासंस्ते शमंययुः ।

के मरने के पश्चात् सम्पूर्ण जगत् अत्यन्त प्रसन्न तथा सुखी हो गया और आकाश निर्मल होगया ॥ २८ ॥ वहाँ उसके गिरने पर पहिले जो

उत्पात के मेघ तथा उल्कापात हुए थे वे सब शान्त हो गये और नदियाँ यथा स्थान अपने २ मार्गों में बहने लगीं ॥ २९ ॥ उसके मरने से सब

सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासंस्तत्रपातिते २९
ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः ॥
बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः ॥
अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।

देव गण अत्यन्त हर्षित चित्त हो गये और गन्धर्व मधुर मधुर स्वर से गान करने लगे ॥३०॥ कितने बाजे बजाने लगे और अप्सराओं के समूह

नाचने लगे सुन्दर शीतल, मन्द, सुगन्ध वायु चलने लगी और सूर्य्य की कान्ति सुन्दर हो गई ॥ ३१॥ अग्निहोत्रियों की बुझी अग्नि जलने लगी

ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद्दिवाकरः ॥
जज्वलुश्चाग्नयः शान्ताः शान्तादिग्जनितस्वनाः

दिशाओं का कोलाहल शब्द शान्त हो गया ॥ ३२ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये शुम्भ वधोनाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ उवाच ॥ ४ ॥ अर्ध ॥ १ ॥ श्लोकाः ॥ २७ ॥ एवं ॥ ३२ ॥ एवमादितः ॥ ५७५ ॥

—❀❀❀—

एकादशोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदांकुशपाशां भीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ॥ ११ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे सेन्द्राः सुरा वह्नि-
पुरागमास्ताम् । कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टला-

ऋषि बोले ॥ १ ॥ जब देवीजी ने महासुरेन्द्र को मारा तब इन्द्र तथा
अग्नि को आगे कर सब देवता अपने इष्ट फल को पाने के कारण प्रसन्न

मुख कमलों से दिशाओं को प्रकाशित करते हुये कात्यायनी देवीजी की स्तुति करने लगे ॥ २ ॥ हे शरणागत दुख हारिणि देवि ! प्रसन्न हो सब

भाद्दिकाशिवक्रास्तुविकाशिताशाः ॥ २ ॥ देविप्रपन्नार्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य । प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥ ३ ॥ आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः

जगत की माता ! प्रसन्न हो, हे विश्वेश्वरी ! प्रसन्न हो विश्व की रक्षा करो, हे देवि ! तुम ही चर और अचर की ईश्वरी हो ॥ ३ ॥ आप जगत की एक ही आधारभूत हैं इसी लिये पृथ्वी रूप से स्थित हैं, हे अतुल

पराक्रम वाली ! आप जल रूप से संस्थित हैं और समूचा जगत आपही से व्याप्त हो रहा है ॥ ४ ॥ आप अतुल वीर्य्यवली विष्णु की शक्ति हैं,

स्थिताऽसि ॥ अपां स्वरूपास्थितया त्वयैतदाप्याय्यते कृत्स्नमलङ्घ्य वीर्यें ॥४॥ त्वं वैष्णवीशक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजम्परमासि माया ॥ सम्मोहितन्देवि समस्तमेतत् त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति हेतुः ॥ ५ ॥ विद्याः

विश्व का बीज हैं, परम माया हैं हे देवि ! आपही ने संम्पूर्ण संसार को मोहित कर रक्खा है, प्रसन्न होने से संसार को मुक्ति देनेवाली हैं ॥ ५ ॥

हे देवि! संसार में जितनी विद्या तथा स्त्रियाँ तथा कला के जानने वाली हैं सो सब आपही के भेद हैं केवल आप स्तुति से परे तथा स्तुति की परम

समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः
सकला जगत्सु ॥ त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ॥ ६ ॥
सर्वभूतायदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी ।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥

शक्ति हैं ॥ ६ ॥ आप सबों में प्रकाशित तथा स्वर्ग मुक्ति को देने वाली हैं यदि आपकी स्तुति की जाय तो आपकी स्तुति के लिये कौन सा सुन्दर स्तव है अर्थात् कोई नहीं है ॥ ७ ॥ हे सब मनुष्यों के हृदय में

बुद्धिरूप से स्थित होने वाली ! हे स्वर्ग मोक्ष की देने वाली ! हे देवि नारायणी ! आपको नमस्कार है ॥ ८ ॥ हे क्षणमुहूर्त आदि काल द्वारा

सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते ।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥८॥
कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनी ।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तुते ॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके ।

मनुष्यों को परिणाम देनेवाली हे संसार के नाश में रुद्ररूप शक्ति ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥ ९ ॥ हे सब मङ्गलों की मङ्गल स्वरूपिणि ! हे सब अर्थों के साधन करने वाली ! हे शरण देने वाली !

हे तीन नेत्रों वाली ! हे गौरि ! हे नारायणी ! आपको नमस्कार है ॥ १० ॥ हे सृष्टि स्थिति तथा विनाश की शक्ति रूप ! हे सनातनी !

शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ॥
सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तुते ११॥
शरणागतदीनार्त परित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते १२

हे गुणाश्रय ! हे गुणमयी ! नारायणी आपको नमस्कार है ॥ ११ ॥ हे शरणागतों की दुःख से रक्षा करने वाली ! हे सबों की पीड़ा हरने वाली ! हे देवि ! आपको नमस्कार है ॥ १२ ॥ हे हंसयुक्त विमान पर

सवार होने वाली ! हे ब्रह्माणी का रूप धारण करने वाली ! हे कुशोदक छिड़कने वाली नारायणी आपको नमस्कार है ॥ १३ ॥ हे माहेश्वरी

हंस युक्त विमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणी ॥
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायाणि नमोऽस्तु ते
त्रिशूल चन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनी ॥
माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते १४
मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे ॥

रूप से त्रिशूल चन्द्र तथा सर्प धारण करने वाली ! हे महा वृषभ वाहिनी ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥ १४ ॥ हे मोर और मुर्गों से युक्त ! हे महाशक्ति धरने वाली ! हे अनघे (पाप रहिते)

हे कौमारी स्वरूप से शोभित ! हे नारायणी ! आपको नमस्कार है ॥ १५ ॥ हे शंख चक्र गदा तथा धनुष इन सुन्दर आयुधों को

कौमारी रूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु ते॥
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्ग गृहीतपरमायुधे ॥
प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते १६॥
गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरे ॥
वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

धरने वाली ! वैष्णवी रूप ! प्रसन्न हो हे नारायणी आपको नमस्कार है हे उग्र बड़े चक्र को धरने वाली ! हे दाँत से पृथ्वी उठाने वाली ! हे वराहरूपिणि ! हे शिवे ! हे नारायणी ! आपको नमस्कार है ॥ १७ ॥

नृसिंह रूप हो दैत्यों को मारने के निमित्त उद्यम करने वाली ! हे तीनों लोक की रक्षा करने वाली ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥ १८ ॥

नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुन्दैत्यान्कृतोद्यमे ।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥
किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले ।
वृत्रप्राणहरेचैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते १९
शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्य महाबले ॥

हे किरीट तथा महावज्र धारण करने वाली ! हे सहस्र नेत्रों से उज्ज्वल हे वृत्रासुर को मारने वाली ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥ १९ ॥
हे शिवदूती के स्वरूप से महाबली दैत्यों को मारने वाली ! भयंकर रूप

वाली हे महा शब्द करने वाली हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥२०॥ हे दंष्ट्रा कराल मुख वाली ! हे मुण्डमाला से शोभित ! हे चामुण्डे ! हे मु-

घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते २०
दंष्ट्राकरालवदने शिरोमाला विभूषणे ॥
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तुते २१
लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टि स्वधे ध्रुवे ॥
महारात्रि महाविद्ये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

ण्डनाशिनी ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥२१॥ हे लक्ष्मी ! हे लज्जा-रूपिणी ! हे महाविद्ये ! हे श्रद्धारूपिणी ! हे निश्चलरूपिणी ! हे महारात्री !

हे महामाये ! हे नारायणी आपको नमस्कार है ॥ २२ ॥ हे बुद्धि स्वरूपे ! हे सरस्वती ! हे वरे हे सत्व प्रधाने ! हे रजोगुणवती ! हे तामस रूपिणी ! हे निश्चले ! हे ईश्वरी ! हे नारायणी आप प्रसन्न होइये आपको नम-

मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवितामसि ।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते २३
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते २४

स्कार है ॥ २३ ॥ हे सर्वस्वरूपे ! हे सर्वेश्वरी ! हे सर्वशक्ति संयुते ! भय से हमारी रक्षा कीजिये, हे दुर्गे ! हे देवी ! आपको नमस्कार है ॥ २४ ॥ हे सौम्य तथा तीन नेत्रों से शोभायमान मुख वाली सब

प्राणियों से हमारी रक्षा कीजिये ! हे कात्यायनी ! आपको नमस्कार है ॥ २५ ॥ ज्वालाओं के कराल तथा अत्यन्त उग्र और सब असुरों

एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् ।
पातु नः सर्वभूतेभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते ॥
ज्वालाकरालमत्युग्र मशेषासुरसूदनम् ।
त्रिशूलम्पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥
हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।

को नाश करने वाला आपका त्रिशूल भय से हमारी रक्षा करें हे भद्रकाली आपको नमस्कार है ॥ २६ ॥ हे देवीजी आप जो अपने शब्द

१–भीतीति पाठान्तरम् ।

से संसार को पूरित करके दैत्यों के तेज को हरती हैं ऐसा आपका घंटा पुत्र की नाईं हमारी सब पापों से रक्षा करे ॥ २७ ॥ असुरों

सा घण्टा पातुनो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव॥

असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः।

शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वान्नता वयम् ॥

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान्सकलानभीष्टान्॥त्वामाश्रितानान्न विपन्नराणां

के रुधिर तथा चर्बी रूपी पंक लिप्त और किरणों से उज्ज्वल आप का खड्ग हमारा कल्याण करे हे चण्डिके! आपको नमस्कार है ॥ २८ ॥ जब आप प्रसन्न होती हैं तब सब रोगों को हर लेती हैं और जब अप्रसन्न

होती हैं तब सब अभीष्ट कामों को नाश कर देती हैं, आपके आश्रित मनुष्यों को कष्ट नहीं होता और जो लोग आपका आश्रय करते हैं वे अन्य लोगों को आश्रय देने योग्य हो जाते हैं ॥ २९ ॥ हे देवी ! हे

त्वामाश्रिता ह्याश्रयताम्प्रयान्ति ॥२९॥ एतत्कृतं यत्कदनन्त्वयाऽद्य धर्मद्विषान्देवि महासुराणाम् ॥ रूपैरनेकैर्बहुधात्ममूर्तिङ्कृत्वाऽम्बिके तत्प्रकरोति काऽन्या ॥ ३० ॥

अम्बिके ! आपने जो अनेक रूपों के द्वारा अनेक प्रकार की मूर्ति धारण कर आज धर्मशत्रु बड़े बड़े असुरों को बध किया सो क्या कोई दूसरी स्त्री कर सकती है ॥ ३० ॥ चौदह विद्याओं छः शास्त्रों और ज्ञान रूपी

दीपक आप्तवाक्य (वेदों) के होने पर भी घोर अन्धकारमयी ममता रूपी गढ़े में इस संसार को सिवाय आपके दूसरा कौन घुमाता है

विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या ॥ ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥३१॥ रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा यत्रारयो दस्युबलानि यत्र ॥ दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये तत्र

॥ ३१ ॥ जहाँ राक्षस हैं, क्रूर सर्प हैं, शत्रु हैं, चोरों के झुण्ड हैं और दावानल है वहाँ तथा समुद्र के मध्य में आप स्थिर होकर विश्व का

पालन करती हैं ॥ ३२ ॥ आप विश्वेश्वरी हैं क्योंकि विश्व का पालन करती हैं, विश्वात्मिका हैं क्योंकि विश्व को धारण करती हैं और जो विश्वेश (ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि) से वन्दना की जाती हैं जो लोग

स्थिता त्वम्परिपासि विश्वम् ॥३२॥ विश्वेश्वरी त्वम्परिपासि विश्वं विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्॥ विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः॥३३॥ देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीतेर्नित्यं यथाऽ

भक्ति पूर्वक आपके सन्मुख नम्र होते हैं वे संसार को आश्रय देनेवाला हो जाते हैं ॥ ३३ ॥ हे देवी ! प्रसन्न होइये जैसे असुरों के मारने से

तुरन्त रक्षा की है उसी तरह शत्रु के भय से सर्वदा हमारी रक्षा कीजिये और जगत् के पापों तथा उत्पातों के होने से उठे महामारी आदि अनेक उपद्रव हैं उनको शीघ्र शान्त कर दीजिये ॥ ३४ ॥ हे देवी ! हे संसार

सुरवधादधुनैव सद्यः ॥ पापानि सर्वजगताम्प्रशमन्नयाशु उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान् ॥ ३४ ॥ प्रणतानाम्प्रसीद त्वन्देवि विश्वार्तिहारिणि । त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥३५॥ देव्युवाच ॥३६॥

के आपत्तियों को दूर करने वाली ! जो लोग प्रणत (नम्र) होते हैं उन पर प्रसन्न होइये, तीनों लोक के प्राणियों को और मनुष्यों को वर.

देनेवाली होइये ॥ ३५ ॥ देवीजी बोली ॥ ३६ ॥ हे देवतागण ! मैं वर देने वाली हूँ जो तुम्हारी इच्छा हो सो जगत् का उपकार करने वाला वर

वरदाऽहं सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ ।
तं वृणुध्वम्प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥

देवा ऊचुः ॥ ३८ ॥

[1]सर्वाबाधाप्रशमनन्त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।

माँगो मैं देता हूँ ॥ ३७ ॥ देवता बोले ॥ ३८ ॥ हे अखिलेश्वरी ! तीनों लोकों के सब बाधाओं को शान्ति करके यही काम करना चाहिये

१–सर्वबाधा प्रशमनमित्यपिपाठः ।

कि जिससे हमारे शत्रुओं का नाश हो ॥ ३९ ॥ देवी बोली ॥ ४० ॥
कि वैवस्वत मन्वन्तर में जब अट्ठाइसवाँ युग आवेगा तब दूसरे शुम्भ

एवमेवत्त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ३९

देव्युवाच ॥ ४० ॥

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे ।
शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ
नन्दगोपगृहे जाता यशोदा गर्भसम्भवा ।

तथा निशुम्भ महासुर उत्पन्न होवेगें ॥ ४१ ॥ तब मैं नन्द गोप के घर में
यशोदा के गर्भ से उत्पन्न हो विन्ध्याचल निवासिनी हो उन दोनों का

नाश करूँगी ॥ ४२ ॥ और अति भयंकर रूप पृथ्वी पर अवतार ले वैप्रचित्त संज्ञक दानवों को मारूँगी ॥ ॥ ४३ ॥ उन वैप्रचित्त नामक महा

ततस्तौ नाशयिष्यामि विंध्याचलनिवासिनी
पुनरप्यति रौद्रेण रूपेण पृथिवीतले ।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांश्च दानवान् ॥
भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान्वैप्रचित्तान्महासुरान्
रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः

असुरों को भक्षण करने से मेरे दाँत अनार के पुष्प के समान लाल हो जायँगे ॥ ४४ ॥ तब स्वर्ग में देवता, और मृत्युलोक में मनुष्य मेरी स्तुति

करेंगे और सर्वदा मुझे रक्तदन्तिका कहेंगे ॥ ४५ ॥ और जब सौ वर्ष तक वर्षा न होगी तब अनावृष्टि में जलाभाव के कारण मुनिगण मेरी स्तुति

ततो मान्देवता: स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवा:
स्तुवन्तोऽव्याहरिष्यान्ति सततं रक्तदन्तिकाम्
भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि।
मुनिभि:संस्तुता भूमौ सम्भाविष्याम्ययोनिजा
तत:शतेन नेत्राणान्निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन्

करेंगे और मैं बिना मनुष्य योनि के स्वयं उत्पन्न होऊँगी ॥४६॥ और मैं सौ नेत्रों से मुनियों को देखूँगी तब मुझे मनुष्य लोग "शताक्षी"

कहेंगे ॥ ४७ ॥ हे देवताओं ! जब तक वर्षा न होगी तब तक मैं अपने शरीर से उत्पन्न प्राणरक्षक शाकों से सब लोगों को पालूँगी ॥ ४८ ॥

कीर्तयिष्यन्ति मनुजाःशताक्षीमितिमांततः
ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः ॥
भरिष्यामि सुराःशाकैरावृष्टेःप्राणधारकैः ४८
शाकम्भरीतिविख्यातिंतदा यास्याम्यहंभुवि
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यंमहासुरम् ४९

और पृथ्वी पर "शाकम्भरी" नाम से विख्यात हो 'दुर्ग' नाम महाअसुर को मारूँगी ॥ ४९ ॥ तब मेरा नाम "दुर्गा देवी" विख्यात होगा और जब

हिमाचल में भयंकर रूप धारण करके ॥ ५० ॥ मुनियों की रक्षा के निमित्त राक्षसों का भक्षण करूँगी तब नम्रमूर्ति हो मुनिगण मेरी स्तुति

दुर्गादेवीति विख्यातन्तन्मे नाम भविष्यति ।
पुनश्चाहं यदा भीमं रूपङ्कृत्वा हिमाचले५०
रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनांत्राणकारणात्
तदा माम्मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः॥
भीमादेवीति विख्यातन्तन्मे नाम भविष्यति

करेंगे ॥ ५१ ॥ और तब मेरा नाम "भीमा" विख्यात होगा, जब अरुण

नामक दैत्य तीनों लोक में महाबाधा करेगा ॥ ५२ ॥ तब मैं असंख्य
भ्रमरों का रूप धारण कर त्रैलोक्य के निमित्त उस महाअसुर को मारूँगी

यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधाङ्करिष्यति ॥
तदाहं भ्रामरं रूपङ्कृत्वाऽसंख्येयषट्पदम् ।
त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम्
भ्रामरीति चमांलोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः

॥ ५३ ॥ और तब सर्वत्र लोग मेरी स्तुति "भ्रामरी" के नाम से करेंगे ।
इस प्रकार जब जब दानवों से बाधा उत्पन्न होगी ॥ ५४ ॥ तब तब मैं

इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति॥

तदा तदावतीर्याहङ्करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥

अवतार लेकर शत्रुओं का नाश करूँगी ॥ ५५ ॥ इस अध्याय भर खीर से आहुति करे। अथवा पूरी हलुवा से। (रक्तादन्ता०) में अनार से आहुति करे।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये देव्यास्तुतिर्नामै-
कादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ उवाच ॥४॥ अर्द्ध ॥१॥ श्लोकाः ॥५०॥
एवम् ॥ ५५ ॥ एवमादितः ॥ ६३० ॥

द्वादशोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ॥
हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापं गुणंतर्ज्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्राम्भजे ॥ १२ ॥

देव्युवाच ॥ १ ॥

एभिःस्तवैश्चमान्नित्यंस्तोष्यतेयःसमाहितः

देवी बोली ॥ १ ॥ कि सावधान हो इन सब स्तवों से जो पुरुष

नित्यप्रति मेरी स्तुति करेगा उसकी सब बाधाओं को मैं निःसन्देह नष्ट करूँगी ॥ २ ॥ जो लोग मधुकैटभ नाश, महिषासुर घात और शुम्भ

तस्याहं सकलां बाधान्नाशयिष्याम्यसंशयम्
मधुकैटभनाशञ्च महिषासुरघातनम् ।
कीर्तयिष्यन्ति येतद्वद्वधंशुम्भनिशुम्भयोः ३
अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यान्नवम्याञ्चैकचेतसः ।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्याममममाहात्म्यमुत्तमम्

निशुम्भ के बध का कीर्तन करेंगे ॥ ३ ॥ अष्टमी चतुर्दशी तथा नवमी को एकाग्रचित्त हो भक्ति पूर्वक मेरे इस उत्तम माहात्म्य को सुनेंगे ॥ ४ ॥

उनको कोई पाप न होगा, पाप से उत्पन्न कोई आपत्ति न होगी और दारिद्र्य तथा प्रियजन का वियोग भी न होगा ॥ ५ ॥ और शत्रु से, चोर

न तेषान्दुष्कृतङ्किञ्चिद्दुष्कृतोत्था न चापदः।
भविष्यति न दारिद्र्यन्नचैवेष्टवियोजनम् ५
शत्रुतो न भयन्तस्य दस्युतो वा न राजतः।
न शस्त्रानलतोयौघात्कदाचित्सम्भविष्यति
तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः

से, राजा से, अस्त्र से अग्नि और जल के समूह से भय न होगा ॥ ६ ॥ अतएव सावधान हो भक्ति पूर्वक मेरे इस माहात्म्य को पढ़ना तथा

सुनना चाहिए क्योंकि यह उत्तम और बड़े कल्याण का मार्ग है ॥ ७ ॥ मेरा यह माहात्म्य महामारी आदि से उत्पन्न सब उपद्रवों को और तीनों प्रकार के सन्तापों को दूर करता है ॥ ८ ॥ मेरा यह माहात्म्य जिस

श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत्
उपसर्गानशेषांस्तु महामारीसमुद्भवान् ।
तथा त्रिविधमुत्पातम्माहात्म्यंशमयेन्मम ॥
यत्रैतत्पठ्यते सम्यङ्नित्यमायतने मम ।
सदा नतद्विमोक्ष्यामिसान्निध्यंतत्रमेस्थितम्

गृह में उक्त प्रकार से नित्य पढ़ा जाता है उस स्थान को मैं कभी नहीं त्यागती, उसी के पास रहती हूँ ॥ ९ ॥ मेरे इस सम्पूर्ण चरित्र को

बलिप्रदान में, पूजा में, अग्नि कार्य में, महोत्सव में पढ़ना तथा सुनना चाहिये ॥ १० ॥ जानकर वा बिना जाने जो कुछ बलिपूजा दान होम

बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्यें महोत्सवे ।
सर्वम्ममैतच्चारितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च १०
जानताजानता वापिबलिपूजान्तथा कृताम।
प्रतीच्छिष्याम्यहम्प्रीत्यावह्निहोमन्तथाकृतम्
शरत्काले महापूजा क्रियते या च बार्षिकी ।

किया जाता है उसको मैं प्रीति पूर्वक ग्रहण करती हूँ ॥ ११ ॥ शरत्काल में जो प्रत्येक वर्ष की महापूजा की जाती है उसमें मेरे इस माहात्म्य

को भक्ति पूर्वक सुन कर ॥ १२ ॥ मनुष्य मेरे प्रसाद से सब बाधाओं से मुक्त और धन धान्य तथा पुत्रों से युक्त हो जायँगे इसमें सन्देह

तस्यांममैतन्माहात्म्यंश्रुत्वा भक्तिसमान्वितः
सर्वाबाधाविनिर्मुक्तोधनधान्यसुतान्वितः ॥
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः १३
श्रुत्वाममैतन्माहात्म्यन्तथाचोत्पत्तयःशुभाः।
पराक्रमञ्च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् १४

नहीं है ॥ १३ ॥ और मेरे इस माहात्म्य को और मेरी उत्पत्ति को जो सुनता है वह युद्ध में पराक्रमी और निर्भय पुरुष हो जाता है ॥ १४ ॥

शत्रु नष्ट हो जाते हैं, यजमान का कल्याण होता है और मेरे माहात्म्य के सुनने वाले मनुष्यों का कुल आनन्दित हो जाता है ॥ १५ ॥ सब

रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणञ्चोपपद्यते ।
नन्दते च कुलम्पुंसाम्माहात्म्यम्मम शृण्वताम
शान्ति कर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने ।
ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ॥
उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः ।

शान्ति कर्मों में, दुःस्वप्न दर्शन में और ग्रहों की पीड़ा में मेरे माहात्म्य को सुने ॥१६॥ तो उपद्रव शान्त और यदि बुरा स्वप्न देखा हो तो अच्छा

स्वप्न हो जाता है ॥ १७ ॥ यह मेरा माहात्म्य भूत प्रेत शाकिनी डाकिनी आदि से ग्रस्त बालकों को शान्ति देने वाला है और मनुष्यों में मारपीट आपस में बिगाड़ कराने का उत्तम प्रकार है और मित्रता

दुःस्वप्नञ्च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते १७
बालग्रहाभिभूतानांबालानां शान्तिकारकम्
सङ्घातभेदे च नृणांमैत्रीकरणमुत्तमम् १८॥
दुर्वृत्तानामशेषाणा म्बलहानिकरम्परम ॥
रक्षोभूतपिशाचानाम्पठनादेव नाशनम् १९

कराने वाला है ॥ १८ ॥ और सब दुराचारी जनों के परम बल का हानिकारक है इसके पाठ करने से राक्षस भूत और पिशाचों का नाश

हो जाता है ॥ १९ ॥ ये सब मेरे माहात्म्य पाठकों को मेरे समीप रखने वाले हैं और पशु, पुष्प, अर्घ, धूप उत्तम गन्ध, दीप ॥ २० ॥ ब्राह्मण भोजन, होम, अखण्ड अभिषेक रात दिन और अन्यान्य

सर्व्वम्ममैतन्माहात्म्यम्मम सन्निधिकारकम्।
पशुपुष्पार्घधूपैश्च गन्धदीपैस्तथोत्तमैः २०
विप्राणाम्भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम्।
अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या २१
प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन्सकृत्सुचरिते श्रुते।

अनेक प्रकार के भोग लगाने से प्रति वर्ष ॥ २१ ॥ जो कुछ मेरे निमित्त किया जाता है सो सब इस माहात्म्य के पढ़ने तथा सुनने ही से हो

जाता है इसको सुनना पापों को नाश करना है अर्थात् आरोग्यता देता है ॥ २२ ॥ मेरे जन्मों का कीर्तन भूतों से रक्षा करता है, युद्धों में जो

श्रुतंहरति पापानि तथारोग्यम्प्रयच्छति २२

रक्षाङ्करोति भूतेभ्यो जन्मनाङ्कीर्तनम्मम ।

युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्टदैत्यनिवर्हणम् २३

तस्मिञ्छ्रुते वैरिकृतम्भयम्पुसान्न जायते ।

युष्माभिःस्तुतयो याश्चयाश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः

दुष्ट दैत्यों के नाश के चरित्र हैं ॥ २३ ॥ उनके श्रवण से मनुष्यों को शत्रु भय नहीं होता, तुमने और ब्रह्मर्षियों ने जो स्तुति की है ॥ २४ ॥

और ब्राह्मणों ने स्तुति की है सो शुभगति देती है और बन में दावाग्नि से घिरा हुआ ॥ २५ ॥ अकेला चोरों से पकड़ा गया वा निर्जन बन

ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम्
अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्निपरिवारितः २५
दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः।
सिंहव्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः ॥
राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो वध्यो बन्धगतोऽपि वा।

में शत्रुओं से घिरा हुआ, बन में सिंह व्याघ्र वा बन के हाथियों से चपेटा हुआ हो ॥ २६ ॥ अथवा राजा ने जिसे क्रोध से मारने की आज्ञा

दे दी हो, अथवा बन्धन में पड़ा हो वा महा समुद्र में छोटी डोंगी पर बैठा हो ॥ २७ ॥ अत्यन्त दारुण युद्ध में जहाँ शस्त्र चल रहे हों अथवा

आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे २७
पतत्सु चापि शस्त्रेषु सङ्ग्रामे भृशदारुणे ।
सर्वाबाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा २८
स्मरन्ममैतच्चरितन्नरो मुच्येत सङ्कटात् ।
मम प्रभावात्सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा २९

सब भयंकर बाधाओं में वा वेदनाओं से दुःखी हो मनुष्य ॥ २८ ॥ मेरे इस माहात्म्य के स्मरण करने से विपत्ति से छूट जाते हैं, मेरे प्रभाव से

सिंहादि चोर और शत्रु ॥ २९ ॥ मेरे चरित्र को पाठ करते ही दूर ही से भाग जाते हैं ॥ ३० ॥ ऋषि बोले ॥ ३१ ॥ बड़ी पराक्रमवाली वह

दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितम्मम ॥३०॥

ऋषिरुवाच ॥ ३१ ॥

इत्युक्त्वासा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा ॥
पश्यतामेव देवानान्तत्रैवान्तरधीयत ।
तेपि देवा निरातङ्काः स्वाधिकारान्यथा पुरा ॥

चण्डिका भगवती यह कह कर ॥ ३२ ॥ वहाँ ही देवताओं के देखते ही अन्तर्ध्यान हो गई तब यज्ञ के भोगने वाले शत्रु रहित सब देवता

भी निर्भय हो गये ॥३३॥ पूर्ववत् अपने अपने अधिकारों को पा गये और देवी जी से देवताओं के वैरी और जगत को विबश करने वाला शुम्भ

यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः ।
दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देवरिपौ युधि ३४
जगद्विध्वंसके तस्मिन्महोग्रेतुलविक्रमे ।
निशुम्भे च महावीर्य्यें शेषाःपातालमाययुः ॥
एवम्भगवती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः ।

तथा बड़ा उग्र अतुल पराक्रमी महाबली निशुम्भ के मारे जाने पर सब दैत्य पाताल को चले गये ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! इस प्रकार वह

भगवती देवी नित्य बारम्बार प्रकट होकर जगत् का परिपालन करती है ॥ ३६ ॥ वही संसार को मोहित तथा उत्पन्न करती है, जब उनसे

सम्भूय कुरुते भूप जगतः परिपालनम् ॥ ३६ ॥
तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वम्प्रसूयते ।
सा याचिता च विज्ञानन्तुष्टा ऋद्धिम्प्रयच्छति
व्याप्तन्तयैतत्सकलम्ब्रह्माण्डम्मनुजेश्वर ।

याचना करते हैं तो विशेष ज्ञान देती हैं और जब प्रसन्न होती हैं तब ऋद्धि देती हैं ॥ ३७ ॥ हे राजन् ! यह समूचा ब्रह्माण्ड उनसे व्याप्त हो रहा है, प्रलय काल में महामारी स्वरूपा महाकाली से व्याप्त होता

है ॥ ३८ ॥ वही जब काल आता है तो महामारी रूप हो जाती है और संसारोत्पत्ति के समय सृष्टिरूप हो जाती है तथा रक्षा के समय

महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया॥
सैवकाले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा।
स्थितिङ्करोतिभूतानांसैवकालेसनातनी ३९
भवकाले नृणांसैवलक्ष्मी वृद्धिप्रदा गृहे।

वही जगत जननी देवी सब प्राणियों की रक्षा करती है ॥ ३९ ॥ जब उत्पत्ति का समय आता है तो वही लक्ष्मी और वृद्धिदात्री (वृद्धि देने वाली) हो जाती है और आपत्ति के समय वही लक्ष्मी बिनाश कर देती

है ॥ ४० ॥ स्तुति करने से तथा पुष्प, धूप, गन्धादि से पूजन करने से

सैवाभावे तथा लक्ष्मीर्विनाशायोपजायते ॥
स्तुतासम्पूजिता पुष्पैर्धूपगन्धादिभिस्तथा ।
ददाति वित्तम्पुत्रांश्च मतिन्धर्मे गतिं शुभाम् ।

धन पुत्र धर्म में शुभ मति को देती है ॥ ४१ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये फलस्तुतिर्नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ उवाच ॥ २ ॥ अर्ध ॥ २ ॥ श्लोकाः ॥ ३७ ॥

एवं ॥ ४१ ॥ एवमादितः ॥ ६७१ ॥

त्रयोदशोऽध्यायः ।

अथ ध्यानम् ।

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।
पाशांकुशवराभीतीर्द्धारयन्तीं शिवाम्भजे ॥ १३ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

एतत्ते कथितम्भूप देवीमाहात्म्यमुत्तमम् ।
एवम्प्रभावा सा देवी ययेदन्धार्यते जगत् २

ऋषि बोले ॥ १ ॥ हे राजन् ! तुमने हमसे यह उत्तम देवी जी का माहात्म्य कहा कि जिनका ऐसा प्रभाव है और इस जगत को धारण

करती हैं ॥ २ ॥ और विष्णु भगवान् की जिस माया से तत्व का ज्ञान होता है उसीसे तुम तथा यह वैश्य और अन्यान्य ज्ञानी पुरुष ॥ ३ ॥

विद्या तथैव क्रियते भगवद्विष्णुमायया।
तया त्वमेषवैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः॥३॥
मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे।
तामुपैहि महाराज शरणम्परमेश्वरीम् ॥४॥
आराधिता सैव नृणाम्भोगस्वर्गापवर्गदा॥५॥

मोह जाते हैं, मोहे गये हैं और मोहे जायँगे अतएव हे महाराज ! उसी परमेश्वरी की शरण लो ॥ ४ ॥ वही आराधना करने से मनुष्यों को

भोग, स्वर्ग तथा मोक्ष देनेवाली हैं ॥ ५ ॥ मार्कण्डेयजी बोले ॥ ६ ॥
कि वह सुरथ नामक राजा ऋषि का यह बचन सुन राज्यहरण से व्याकुल

मार्कण्डेय उवाच ॥ ६ ॥

इति तस्य वचःश्रुत्वा सुरथःस नराधिपः॥७॥
प्रणिपत्य महाभागन्तमृषिं संशितव्रतम् ।
निर्विण्णोऽतिममत्वेन राज्यापहरणेन च॥८॥
जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने ।

॥ ८ ॥ शीघ्र ही तप करने चला गया । हे महामुने ! वह वैश्य जगदम्बा
जी के दर्शन के निमित्त नदी के किनारे बैठ गया ॥ ९ ॥ वहाँ देवी सूक्त

का जप करते भया बड़ा भारी तप किया फिर वे दोनों उस नदी के तीर पर देवीजी की मृत्तिका की मूर्ति बना कर ॥ १० ॥ पुष्प, धूप, होम और

सन्दर्शनार्थमम्बाया नदी पुलिनसंस्थितः ९

स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तम्परञ्जपन् ।

तौतस्मिन्पुलिनेदेव्याःकृत्वामूर्तिंमहीमयीम्

अर्हणाञ्चक्रतुस्तस्याः पुष्पधूपाग्नितर्पणैः ।

निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ ॥

तर्पण करके उस मूर्ति की पूजा करते थे, प्रथम अल्पाहार कर पुनः निराहार हो देवी जी में चित्त लगा सावधान हो ॥ ११ ॥ अपने शरीर

का रुधिर टपका टपका जप करने लगे इस प्रकार तीन वर्ष तक एकाग्र चित्त से आराधना करने पर उन दोनों से जगद्धात्री चण्डिका सन्तुष्ट

ददतुस्तौ बलिञ्चैव निजगात्रासृगुक्षितम् ।
एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः १२
परितुष्टा जगद्धात्रीप्रत्यक्षम्प्राह चण्डिका १३

देव्युवाच ॥ १४ ॥

यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप त्वया च कुलनन्दन १५

हुई और प्रत्यक्ष बोलीं ॥ १३ ॥ देवी जी बोलीं ॥ १४ ॥ कि हे राजन् !! तुमको जिस बात की प्रार्थना करनी हो और हे वैश्य तुम्हें भी जो

प्रार्थना करनी हो ॥ १५ ॥ सो सब मुझमे कहो मैं प्रसन्न हूँ जो माँगो वह तुमको दूँगी ॥ १६ ॥ मार्कण्डेयजी बोले ॥ १७ ॥ कि राजा कहने

मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वम्परितुष्टा ददामि तत् ॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ १७ ॥

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि ।

अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् १८

सोपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रेनिर्विण्णमानसः ।

लगा कि अगले जन्म में अखण्ड राज्य हो ॥१८॥ और इस जन्म में अपने बाहुबल से शत्रुओं को मारकर निज राज्य पाऊँ । बुद्धिमान वैश्य ने भी

संग को नाश करने वाले ज्ञान को वर में माँगा ॥ १६ ॥ देवीजी बोलीं ॥ २० ॥ हे राजन् ! थोड़े ही दिनों में तू अपना राज्य पावेगा ॥२२॥ और

ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्गविच्युतिकारकम् ॥

देव्युवाच ॥ २० ॥

स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वंराज्यम्प्राप्स्यते भवान्
हत्वारिपूनस्खलितन्तव तत्र भविष्यति २२
मृतश्च भूयःसम्प्राप्य जन्म देवाद्विवस्वतः २३

बैरियों को मार कर तेरा अखण्ड राज्य होगा ॥ २३ ॥ और मर जाने पर

सूर्य देवता से जन्म पाकर ॥२४॥ पृथ्वी पर सावर्णि नामका मनु होगा। हे वैश्यवर्य! तुमने जो मुझसे मनवाञ्छित वर माँगा है ॥२५॥ सो मैं सिद्धि

सावर्णिको नाममनुर्भवान् भुवि भविष्यति॥
वैश्यवर्य त्वयायश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवाञ्छितः
तम्प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानम्भविष्यति।
मार्कण्डेय उवाच ॥ २७ ॥
इति दत्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् ।

के वास्ते देती हूँ इससे तुम्हें ज्ञान प्राप्त होगा ॥२६॥ मार्कण्डेयजी बोले॥२७॥ इस प्रकार देवीजी ने उन दोनों को मनोवाञ्छित वर दिया ॥ २८ ॥ उन

दोनों से भक्तिपूर्वक स्तुति की गईं भगवती अन्तर्ध्यान हो गईं और क्षत्रियों में श्रेष्ठ सुरथ राजा देवी से वर पाकर सूर्य्य से जन्म पाकर

बभूवांतर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता
एवन्देव्यावरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ।
सूर्य्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः २६

सावर्णि नाम का मनु हो गया ॥ २६ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सुरथवैश्ययोर्वरप्रदा-नन्नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥ उवाच ॥६॥ अर्द्ध ॥११॥ श्लोकाः ॥ १२ ॥ एवम् ॥ २९ ॥ एवमादितः ॥ ७०० ॥

ॐ ऐं ह्रीं क्लींचामुण्डायैविच्चे ॥ अने-न्न्यासं कृत्वा पुनः जपं समर्प्य भगवतीं प्रणमेत् ॥

॥ अथोत्तरन्यासाः ॥

खड्गिनीशूलिनीघोरा० हृदयाय नमः ॥ शूलेनपाहिनोदेवि० शिरसेस्वाहा ॥ प्राच्यांरक्षप्रतीच्यांच० शिखायैवषट् ॥ सौम्यानियानि-रूपाणि० कवचाय हुं ॥ खड्गशूलगदादीनि० नेत्रत्रयायवौषट् ॥ सर्व्वस्वरूपेसर्वेशे० अस्त्रायफट् ॥ एवमेव करन्यास ङ्कुर्यात् ॥

अथ दुर्गा ध्यानम्–

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितांभीषणां ।
कन्याभिःकरवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ॥
हस्तैश्चक्रधरासिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं ।
बिभ्राणामनलात्मिकांशशिधरांदुर्गां त्रिनेत्रांभजे ॥ १ ॥

अथ देवी सूक्तम् ।

देवा ऊचुः । नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ॥ नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताःस्म ताम् ॥ १ ॥ रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमोनमः॥ ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिरायै सुखायै सततं नमः ॥ २ ॥ कल्याण्यै प्रणतां वृद्धयै सिद्धयै कूर्म्यै नमो नमः ॥

नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यैते नमोनमः ॥ ३ ॥ दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ॥ ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायैसततं नमः ॥ ४ ॥ अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ॥ नमो-जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमोनमः ॥ ५ ॥ यादेवी सर्वभूतेषु विष्णु-मायेति शब्दिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ ६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्त-स्यैनमोनमः ॥ ७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेणसंस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ ८ ॥ या देवीसर्वभूते-षुनिद्रारूपेणसंस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ ९ ॥ यादेवीसर्वभूतेषु क्षुधारूपेणसंस्थिता ॥ नमस्तस्यै नम-स्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ १० ॥ या देवी सर्वभूतेषु छायारू-

पेणसंस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ ११ ॥ यादेवीसर्वभूतेषु शक्तिरूपेणसंस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ १२ ॥ यादेवीसर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ १३ ॥ यादेवीसर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेणसंस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमो नमः ॥ १४ ॥ या देवीसर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ १५ ॥ यादेवीसर्वभूतेषुलज्जा रूपेणसंस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ १६ ॥ यादेवीसर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ १७ ॥ यादेवीसर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ १८ ॥ यादेवी

सर्वभूतेषुकान्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमोनमः ॥ १९ ॥ यादेवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ २० ॥ यादेवी सर्वभूतेषु
वृत्तिरूपणेसंस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥२१॥
यादेवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नम-
स्तस्यैनमोनमः ॥ २२ ॥ यादेवीसर्व भूतेषु दयारूपेण संस्थिता ॥
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २३ ॥ यादेवी सर्वभूतेषु
तुष्टिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥२४॥
यादेवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमोनमः ॥ २५ ॥ यादेवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ॥
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यैनमोनमः ॥ २६ ॥ इन्द्रियाणाम-

धिष्ठात्री भूतानांचाखिलेषु या ॥ भूतेषु सततंतस्यै व्याप्ति देव्यै नमोनमः ॥ २७ ॥ चितिरूपेणयाकृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिताजगत् ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २८ ॥ स्तुतासुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेणदिनेषु सेविता ॥ करोतु सा नःशुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥ २९ ॥ या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशाचसुरैर्नमस्यते ॥ याचस्मृता तत्क्षणमेवहन्ति नः सर्वापदोभक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥ इति देवीसूक्तम् ॥ गुह्यातिगुह्यगोप्त्रीत्वं गृहाणास्मतकृतंजपम् ॥ सिद्धिर्भवतुमेदेवित्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥ ३१ ॥ जगदम्बार्पणमस्तु । इति देव्या दक्षिणहस्ते जपं समर्प्य रहस्यत्रयं पठेत् ।

❀ अथ ❀

प्राधानिकंरहस्यं कृताकृतम् ।

अस्य श्रीसप्तशतीरहस्यत्रयस्यनारायणऋषिः अनुष्टुप्छन्दः । महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवता यथोक्तफलावाप्त्यर्थं जपे विनियोगः ॥ राजोवाच ॥ भगवन्नवतारामे चण्डिकायास्त्वयोदिताः ॥ एतेषां प्रकृतिंब्रह्मन्प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥ आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन तद्द्विज ॥ विधिना ब्रूहि सकलं यथावत्प्रणतस्य मे ॥२॥

सप्तशती के तीनों रहस्यों के नारायण ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है इनकी महाकाली महालक्ष्मी और महा सरस्वती देवता हैं मनोवांछित फल प्राप्ति के निमित्त इसका जप करते हैं । राजा बोले कि हे भगवन् ! आपने चण्डिका देवी के अवतारों को तो कहा परन्तु इनकी प्रधान प्रकृति कहिये ॥ १ ॥ हे द्विज ! मुझे देवी जी के जिस स्वरूप की आराधना करनी चाहिये सो सब विधि पूर्वक कहिये ॥२॥ ऋषि बोले यह रहस्य अत्यन्त

ही गुप्त है परन्तु हे राजन् ! तुम भक्त हो अतएव मेरे पास ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो तुमसे न कहूँ ॥ ३ ॥ सबों की आदिस्वरूपा महालक्ष्मी तीन गुण वाली परमेश्वरी लक्ष्य और अलक्ष्य स्वरूपा सबों में व्याप्त हो स्थित हैं ॥ ४ ॥ हे राजन् ! वह मातुलिङ्ग

ऋषिरुवाच ॥ इदंरहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते ॥ भक्तोऽसीति न मे किञ्चित्तवा वाच्यं नराधिप ॥ ३ ॥ सर्वस्याद्यामहालक्ष्मी त्रिगुणा परमेश्वरी । लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्यकृत्स्नं व्यवस्थिता ॥ ४ ॥ मातुलिङ्गं गदांखेटंपानपात्रंचाबिभ्रती । नागंलिङ्गंचयोनिंचाविभ्रतीनृपमूर्धनि ॥ ५ ॥ तप्तकाञ्चनवर्णाभा तप्तकाञ्चनभूषणा ॥ शून्यंतदाखिलंस्वेन पूरयामासतेजसा ॥६॥ शून्यंतदाखिलंलोकं विलोक्यपरमेश्वरी ॥

अर्थात् विजौरा फल, गदा, खेट (ढाल), पानपात्र हाथों में तथा नागलिङ्ग और शिर पर धारण किये ॥ ५ ॥ तप्त सोना के समान शोभा वाली तप्त सोने के आभूषणों को धारण किये अपने तेज से सम्पूर्ण आकाश को पूरित करती ॥ ६ ॥ सम्पूर्ण संसार को

शून्य देख केवल तमोगुण से एक दूसरा रूप उसने धारण किया ॥७॥ वह भिन्न अञ्जन के समान शोभा वाली, दंष्ट्रा से शोभायमान सुन्दर मुखवाली विशाल नेत्रों से शोभित मध्य कटि वाली स्त्री रूप होगई ॥ ८ ॥ खड्ग, पात्र, शिर, और खेट से शोभित चार

बभाररूपमपरं तमसा केवलेन हि ॥ ७ ॥ साभिन्नाञ्जनसंकाशादंष्ट्राङ्कितवराननना ॥ विशाललोचनानारी बभूव तनुमध्यमा ॥ ८ ॥ खड्गपात्राशिरः खेटैरलंकृतचतुर्भुजा ॥ कबन्धहारंशिरसाबिभ्राणाऽहिशिरः स्रजम् ॥ ९ ॥ सा प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ॥ नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यंनमोनमः ॥ १० ॥ तां प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ॥ ददामि तव नामानियानि कर्माणि तानि ते ॥ ११ ॥

भुजा वाली कबन्ध के हार तथा सर्प से शिर की माला को शिर से धारण किये उस तामसी उत्तमा नारी ने महालक्ष्मी से कहा, कि हे माता ! मेरा नाम और कर्म बताओ मैं तुमको नमस्कार करती हूँ ॥ ९ ॥ १० ॥ उस महालक्ष्मी ने उस उत्तम मानसी स्त्री

रूप से कहा कि मैं नाम तथा जो कर्म हैं सो कहती हूँ ॥ ११ ॥ (१) महामाया (२) महाकाली (३) महामारी (४) क्षुधा (५) तृषा (६) निद्रा (७) तृष्णा (८) एकवीरा (९) कालरात्री और (१०) दुरत्यया ॥ १२ ॥ ये तुम्हारे कर्म्मानुसार नाम कहे हैं इन नामों को और तुम्हारे कर्म्मों को जानकर जो पढ़ता है सो सुख

महामाया महाकाली महामारी क्षुधातृषा ॥ निद्रातृष्णाचैकवीराकालरात्रिदुरत्यया ॥ १२ ॥ इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानिकर्मभिः ॥ एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सो श्नुते सुखम् ॥ १३ ॥ तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप ॥ सत्त्वाख्येनातिशुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ॥ १४ ॥ अक्षमालांकुशधरावीणापुस्तकधारिणी ॥ साबभूववरानारी नामान्यस्यै व सा ददौ ॥ १५ ॥ महाविद्या महावाणी

पाता है ॥ १३ ॥ हे राजन् ! ऐसी महालक्ष्मी ने अति शुद्ध सत्वगुण से चन्द्रमा के समान शोभायमान दूसरा स्वरूप धर लिया ॥ १४ ॥ अक्षमाला, अंकुश, बीणा और पुस्तक धारण किये उत्तम नारी हो गई और इसका भी नाम कहने लगी ॥१५॥ (१)

महाविद्या (२) महावाणी (३) भारती (४) वाक् (५) सरस्वती (६) आर्य्या (७) ब्राह्मी (८) कामधेनु (९) वेदगर्भा और (१०) सुरेश्वरी ॥ १६ ॥ महालक्ष्मी ने महाकाली और महासरस्वती से कहा कि तुम दोनों अपने स्वरूपानुसार स्त्री पुरुष का जोड़ा उत्पन्न करो ॥ १७ ॥ महालक्ष्मी ने उन दोनों से ऐसा कह स्वयं सुन्दर,

भारती वाक् सरस्वती ॥ आर्याब्राह्मीकामधेनुर्वेदगर्भासुरेश्वरी ॥ १६ ॥ अथोवाच महालक्ष्मीर्महाकालीं सरस्वतीम् ॥ युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥ १७ ॥ इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् ॥ हिरण्यगर्भौरुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ ॥ १८ ॥ ब्रह्मन्विधेविरिंचेतिधातारित्याहतं नरम् । श्रीः पद्मे कमलेलक्ष्मीत्याहमातास्त्रियं च ताम् ॥ १९ ॥ महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह ॥

कमलासन पर बैठे स्त्री पुरुषों का एक जोड़ा उत्पन्न किया ॥ १८ ॥ और पुरुषका हे ब्रह्मन् ! हे विधे, विरञ्चि और हेधातः तथा स्त्री का श्री पद्मा, कमला और लक्ष्मी नाम रक्खा ॥ १९ ॥ महाकाली ने तथा महासरस्वती ने भी अपने जोड़े रचे इनका भी नाम

और स्वरूप तुमसे कहती हूँ ॥ २०॥ महाकाली ने नीलकण्ठ रक्तबाहु और श्वेत शरीर वाले तथा ललाट पर चन्द्रमा धारण किये पुरुष और गौरी स्त्री को उत्पन्न किया ॥२१॥ और भद्र, शङ्कर, स्थाणु, कपर्दी तथा त्रिलोचन ये पुरुष के और त्रयी, विद्या, कामधेनु,

एतयोरापिरूपाणि नामानिचवदामिते ॥ २० ॥ नीलकण्ठं रक्तबाहुंश्वे-ताङ्गचन्द्रशेखरम् ॥ जनयामास पुरुषं महाकालीं सितां स्त्रियम् ॥२१॥ स रुद्रः शंकरः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः ॥ त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषा चरा स्वरा ॥ २२ ॥ सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप ॥ जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥ २३ ॥ विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः ॥ उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी

भाषा, अक्षरा और स्वरा ये स्त्री के नाम धरे ॥ २२ ॥ हे राजन् ! सरस्वतीजी ने गौरी स्त्री, कृष्ण पुरुष को उत्पन्न किया उन दोनों का नाम कहती हूँ ॥ २३ ॥ पुरुष का विष्णु, कृष्ण, हृषीकेश, वासुदेव और जनार्दन तथा स्त्री का उमा, गौरी, सती चण्डी

सुन्दरी, सुभगा और शुभा ॥ २४ ॥ फिर ये स्त्रियाँ यथार्थ यही पुरुषत्व प्राप्त करेंगी, ये दिव्य दृष्टि वाले पुरुष तो देखते हैं साधारण जन नहीं जानते हैं ॥२५॥ हे नृप! महालक्ष्मी ने वेदत्रयीपत्नीब्रह्मा को दिया, वर देने वाली गौरी को शिव के निमित्त और

सुभगा शुभा ॥ २४ ॥ एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे ॥ चक्षुष्मन्तोऽनुपश्यन्ति नेतरे तद्विदो जनाः ॥ २५ ॥ ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मींनृपत्रयीम् । रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥२६॥ स्वरयासह संभूय विरिंच्योऽण्डमजीजनत् ॥ बिभेद भगवान् रुद्रस्तद्गौर्यासह वीर्यवान् ॥ २७ ॥ अण्डमध्ये प्रधानादि कार्यजातमभून्नृप ॥ महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम् ॥ २८ ॥ पुपोष पालयामास

विष्णु को लक्ष्मी दी ॥२६॥ ब्रह्मा ने स्वरा (सरस्वती) के साथ मिलकर ब्रह्माण्ड को रचा और वीर्य्यवान् रुद्र भगवान् ने गौरी के साथ मिल उसे फोड़ा ॥ २७ ॥ हे राजन् ! उसे ब्रह्माण्ड में प्रधानादि जो कार्य्य हुये हैं सो सम्पूर्ण जगत् स्थावर और जंगम महा-

भूत जो पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से उत्पन्न हुये हैं ॥ २८ ॥ फिर विष्णु भगवान् ने लक्ष्मी के साथ होकर पालन किया। और महेश्वर ने गौरी के साथ हो उन सबों का संहार किया ॥ २९ ॥ ये महालक्ष्मी सर्व सत्यमयी ईश्वरी है वोही निराकार तथा

तल्लक्ष्म्या सह केशवः ॥ संजहार जगत्सर्वं सहगौर्या महेश्वरः ॥२९॥
महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्वमयीश्वरी ॥ निराकाराचसाकारा सैव नाना-भिधानभृत् ॥३०॥ नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित् ॥३१॥

इति प्राधानिकंरहस्यं समाप्तम् ॥

साकार हो अनेको नामों को धारण करती है ॥३०॥ यही लक्ष्मी अन्यान्य नामान्तरों से भी पुकारी जाती है पर जो नाम कहे हैं उनसे भिन्न नहीं है ॥ ३१ ॥

वैकृतिक रहस्यम् ।

ऋषिरुवाच ।

त्रिगुणा तामसी देवी सात्विकी या त्रिधोदिता ॥ सा शर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १ ॥ योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा ॥ मधुकैटभनाशार्थं यां तुष्टावाम्बुजासनः ॥ २ ॥ दशवक्त्रा दशभुजा दशपादाञ्जनप्रभा ॥ विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया

ऋषि बोले कि तुमने जो त्रिगुणा, तामसी और सात्विकी और राजसी देवी जो तीन प्रकार की कही है वह शर्वा, चण्डिका, दुर्गा, भद्रा और भगवती कहलाती हैं ॥१॥ तमोगुणवाली महाकाली विष्णु भगवान की योगनिद्रा कही जाती हैं। मधुकैटभ के नाश के निमित्त जिसकी स्तुति ब्रह्मा ने की थी ॥२॥ दशमुख दश भुजा और दश चरण वाली तथा काजल के समान श्याम प्रभा वाली तीस नेत्रों की विशाल माला से शोभायमान है ॥३॥

हे राजन् ! चमकीले दाँत और दंष्ट्रा वाली, भयङ्कर स्वरूपिणी महालक्ष्मी में रूप सौभाग्य और कान्ति की प्रतिष्ठा रूप हो स्थित हैं ॥ ४ ॥ और खड्ग बाण, गदा, शूल, शंख, चक्र, भुशुण्डी, (तोप) परिघ, धनुष और लोहू टपकते सिर को धारण करती है ॥५॥

॥ ३ ॥ स्फुरद्दशनदंष्ट्रासा भीमरूपापिभूमिप ॥ रूपसौभाग्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः ॥ ४ ॥ खड्गबाणगदाशूल शङ्खचक्रभुशुण्डि-भृत् ॥ परिघं कार्मुकंशीर्षंनिश्च्योतद्रुधिरं दधौ ॥ ५ ॥ एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया ॥ आराधितावशीकुर्य्यात्पूजाकर्तुश्चराचरम् ॥ ६ ॥ सर्वदेवशरीरेभ्यो याविर्भूतामितप्रभा ॥ त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी ॥ ७ ॥ श्वेतानना नीलभुजा सुश्वे-

यह महाकाली दुरत्यया विष्णु की वह माया है कि जिसकी आराधना से (सचराचर) सब पूजा करने वाले के वश में हो जाते हैं ॥६॥ जो सब देवताओं के शरीर से उत्पन्न हुई हैं वह अतुल कान्ति वाली त्रिगुण महालक्ष्मी साक्षात् महिषमर्दिनी है ॥ ७ ॥ श्वेत

मुख, नील भुजा, श्वेत स्तनमण्डल वाली, रक्त कटि तथा रक्त, चरण, नीली पिण्डली तथा जंघा और उत्कट मद वाली ॥ ८ ॥ चित्र विचित्र जघनों वाली विचित्र माला वस्त्र और आभूषण धारण करने वाली, विचित्र लेपन किये कान्ति रूप सौभाग्य से शोभित

तस्तनमण्डला ॥ रक्तमध्या रक्तपादा नीलजंघोरुरुन्मदा ॥ ८ ॥ सुचित्रजघनाचित्रमाल्याम्बर विभूषणा ॥ चित्रानुलेपनाकान्तिरूपसौभाग्यशालिनी ॥९॥ अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती ॥ आयुधान्यत्र वक्ष्यंते दक्षिणाधः करः क्रमात् ॥ १० ॥ अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ॥ चक्रं त्रिशूलं परशुः शंखो घण्टा च पाशकः ॥ ११ ॥ शक्तिर्दण्डश्चर्मचापं पानपात्रं कमण्डलुः ॥ अलंकृतभुजामे-

॥ ९ ॥ अठारह भुजा वाली पूज्य देवी सहस्र भुजा वाली भी हैं अब क्रम से दक्षिण तथा वाम हाथों के आयुध कहते हैं ॥१०॥ अक्षमाला (१) कमल (२) बाण (३) तलवार (४) वज्र (५) गदा (६) चक्र (७) त्रिशूल (८) फरसा (९) शंख

(१०) घण्टा (११) फांसी (१२) शक्ति (१३) दण्ड (१४) ढाल (१५) धनुष (१६) पानपात्र (१७) कमण्डलु (१८) से अलंकृत भुजा वाली कमल का आसन ॥ १२ ॥ सूर्य देवमयी ईश्वरी । इन महालक्ष्मी की जो मनुष्य पूजा करेंगे वे मनुष्यों तथा देवताओं के स्वामी होंगे ॥ १३ ॥ जो केवल सत्वगुण प्रधान वाली

भिरायुधैःकमलासनाम् ॥ १२ ॥ सर्वदेवमयीमीशांमहाल-च्मीमिमां नृप ॥ पूजयेत्सर्वलोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत् ॥ १३ ॥ गौरीदेहात्समुद्भूता या सत्वैकगुणाश्रया ॥ साक्षात्सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥ १४ ॥ दधौचाष्टभुजा बाणान्मुशले शूलचक्रभृत् ॥ शंखं घंटां लाङ्गलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥ १५ ॥ एषा सम्पूजिता

गौरी के देह से उत्पन्न हुई हैं सो शुम्भासुर को मारने वाली साक्षात् सरस्वती कहाती हैं ॥१४॥ हे राजन् ! वह आठ भुजा वाली है और बाण (१) मूशल (२) शूल (३) चक्र (४) शंख (५) घण्टा (६) हल (७) और धनुष (८) धारण करती हैं ॥ १५ ॥ वह शुम्भ निशुम्भ नाशिनी देवी भक्ति पूर्वक पूजन करने से सर्वज्ञत्व देती हैं

॥ १६ ॥ हे राजन् ! ये सब तो मूर्तियों के स्वरूप कहे अब इन जगन्माताओं की उपासना अलग अलग सुनों ॥ १७ ॥ जब महालक्ष्मी का पूजन करे तब दक्षिण तथा उत्तर की ओर क्रम से महाकाली और महासरस्वती का और पीछे की ओर तीनों मिथुनों का

भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति । निशुम्भमाथिनी देवी शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥ १६ ॥ इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव ॥ उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥ १७ ॥ महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली सरस्वती ॥ दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्रयम् ॥ १८ ॥ विरिञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे ॥ वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवतात्रयम् ॥ १६ ॥ अष्टादशभुजामध्ये वामे चास्या दशानना ॥ दक्षिणेऽ-

पूजन करना चाहिये ॥ ८ ॥ सरस्वती के साथ ब्रह्मा का बीच में, गौरी के साथ रुद्र का दक्षिण में, लक्ष्मी के साथ हृषीकेश का उत्तर में और आगे तीनों देवताओं का पूजन करना चाहिये ॥ १९ ॥ बीच में अर्थात् महालक्ष्मी के सामने अठारह भुजा वाली लक्ष्मी

का इसके वाम भाग में अर्थात् महाकाली के सामने दशमुख वाली महाकाली का और दक्षिण भाग में महासरस्वती का पूजन करना चाहिये।।२०।। हे राजन्! यदि केवल अठारह भुजा वाली या दश भुजा वाली का सम्पूर्ण अरिष्ट शान्ति के निमित्त पूजन करे तो काल और

ष्टभुजा लक्ष्मीर्महतीतिसमर्चयेत् ॥ २० ॥ (पूर्वादिदलतः पूज्याश्चासितांगादिभैरवाः) अष्टादश भुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ॥ २१ ॥ दशानना चाष्टभुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥ दशानना यदा पूज्या-दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥ २२ ॥ कालमृत्यू च संपूज्यौ सर्वारिष्ट प्रशान्तये ॥ यदा चाष्टभुजा पूज्या शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥ २३ ॥ न-वास्याः शक्तयः पूज्यास्तथा रुद्रविनायकौ ॥ नमो देव्या इति स्तोत्रै-

मृत्यु का पूजन करे (अष्ट भुजा के पूजन का विशेष रूप दूसरी प्रकार यह है कि) जब शुम्भासुरमर्दिनी अष्टभुजा का पूजन करना हो तो ॥ २१ ॥ २२ ॥ इसकी नव शक्ति का पूजन करे। (क्रम से दक्षिण तथा उत्तर की ओर) रुद्र और गणेश का पूजन करे और

"नमो देव्यै" इस स्तोत्र से महालक्ष्मी का पूजन करे ॥ २३ ॥ २४॥ जगदम्बाके तीनों अवतारों का पूजन स्तोत्र मंत्र के ही आश्रित है और अष्टादश भुजावाली पूज्या महिष-मर्दिनी ॥ २५ ॥ महालक्ष्मी हैं तथा वही महाकाली, महासरस्वती पुण्य पापों की ईश्वरी

महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥ २४ ॥ अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः ॥ अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥ २५ ॥ महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती ॥ ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोक महेश्वरी ॥ २६ ॥ महिषान्तकरीयेन पूजिता स जगत्प्रभुः ॥ पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ॥ २७ ॥ अर्घ्यादिभिरलङ्कारैर्गन्धपुष्पैस्तथाक्षतैः ॥ धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नाना भक्ष्यसमन्वितैः ॥ २८ ॥

और सब लोकों को महेश्वरी हैं ॥ २६ ॥ महिषासुर मर्दिनी का पूजन करने वाला जगत् का स्वामी होता है। जगत् को धारण करने वाली और भक्तों से प्रीति करने वाली चण्डिका का नाना प्रकार के भक्ष्य पदार्थ से पूजन करना चाहिये ॥२८॥ और रुधिराक्त

बलिमाँससे तथा मद्यसे पूजन करना चाहिये। ये चिन्हित श्लोक असङ्गत है क्योंकि सो-मयाग के तुल्य यहाँ पर भी मांसादि से ब्राह्मणों को भी पूजन करना चाहिये ये पं० काशीनाथजी कहते हैं, बलि से पूजा वर्जित नहीं है ॥२९॥ हे राजन् ! ब्राह्मणों को भी

रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप ॥ (बलिमांसादिपूजेयं विप्र-वर्ज्या मयेरिता ॥२६॥ तेषां किल सुरामांसैर्नोक्ता पूजा नृप क्वचित्) प्रणामाचमनीयैश्च चन्दनेन सुगन्धिना ॥ ३० ॥ सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भ-क्तिभावसमन्वितैः ॥ वामभागेऽग्रतो देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ॥३१॥ पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया ॥ दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं

मद्य मांस से पूजन करना चाहिये। प्रणाम, आचमन, चन्दन, और सुगन्ध से ॥ ३० ॥ भक्ति भावपूर्वक कर्पूर और पान से पूजन करना चाहिये देवी के आगे वाम में महासुर के कटे शिर का पूजन करना चाहिये ॥ ३१ ॥ जो मनुष्य ईश्वरी से मोक्ष चाहता हो वह

महिष का पूजन करे और दक्षिण और आगे धर्म्म रूप ईश्वर सिंह को ॥ ३२ ॥ जिसने चराचर को धारण किया है और देवी का वाहन है उसका पूजन करे और हाथ जोड़ कर इन चरित्रों से स्तुति करे ॥ ३३ ॥ यदि समय न मिले तो मध्यम ही चरित्र से

धर्ममीश्वरम् ॥ ३२ ॥ वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम् ॥ कुर्याच्चस्तवनंधीमांस्तस्या एकाग्रमानसः ॥ ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः ॥ ३३ ॥ एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥ चरितार्धं तु न जपेज्जपंच्छिद्रमवाप्नुयात् ॥ ३४ ॥ (स्तोत्रमन्त्रैःस्तुवीतेमां यदि वा जगदम्बिकाम्) ॥ प्रदक्षिणानमस्कारान्कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥ ३५ ॥ क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः । प्रतिश्लोकं

स्तुति करे। परन्तु दूसरे जो प्रथम और उत्तम चरित्र है इन दोनों में एक चरित्र का पाठ न करे और आधे चरित्र का भी पाठ न करे ऐसा करने से जप खण्डित होता है ॥ ३४ ॥ स्तोत्र तथा मन्त्र से जगदम्बिका की स्तुति कर प्रदक्षिणा और नमस्कार करके हाथ जोड़

दण्डवत् करे ।। ३५ ।। तब सावधान हो जगद्धात्री से वारम्वार क्षमा माँगे और तिल घी दूध तथा खीर से प्रत्येक श्लोक करके हवन करे ।।३६।। वा स्तोत्र के मंत्रों से चण्डिका के अर्थ शुभ हवन करे और सावधान हो बहुत से नाम के पदों से देवी का पूजन करे ।। ३७ ।। तब निश्चल हो हाथ जोड़ आत्मा में प्राणों को धारणकर बहुत काल तक

च जुहुयात्पायसं तिलसर्पिषा ।। ३६ ।। जुहुयात्स्तोत्र मन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः ।। भूयोनामपदैर्देवीं पूजयेत्सुसमाहितः ।। ३७ ।। प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्रणम्यारोप्यचात्मनि ।। सुचिरं भावयेद्देवीं चंडिकां तन्मयो भवेत् ।। ३८ ।। एवं यः पूजयेद्भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् ।। भुक्त्वा भोगान्यथाकामं देवीसायुज्यमाप्नुयात् ।। ३९ ।। योन पूजयते

चण्डिका देवी की भावना कर तन्मय हो जाय ।।३८।। इस प्रकार भक्ति पूर्वक जो मनुष्य परमेश्वरी का प्रतिदिन पूजन करता है वह मनवांच्छित भोगों को भोग कर देवी के सायुज्य मोक्ष पद को प्राप्त होता है ।। ३९ ।। और जो मनुष्य भक्तों से प्रीति करने

वाली चण्डिका को नित्य नहीं पूजता है तो परमेश्वरी उसके पुण्यों को भस्म कर उसे दग्ध कर देती हैं ॥ ४० ॥ अतएव हे राजन् ! तुम सब लोगों को माहेश्वरी चण्डिका

नित्यं चंडिकां भक्तवत्सलाम् ॥ भस्मीकृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत्परमेश्वरी ॥ ४० ॥ तस्मात्पूजय भूपाल सर्वलोकमहेश्वरीम् ॥ यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यसि ॥ ४१ ॥

॥ इति वैकृतिकंरहस्यं समाप्तम् ॥

के कथित विधान से पूजन करना चाहिये इससे आप लोग सुख पाइयेगा ॥ ४१ ॥

अथ मूर्तिरहस्यम् ।

ऋषिरुवाच ।

नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा ॥ स्तुता संपूजिता भक्त्यावशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ॥ १ ॥ कनकोत्तमकान्तिः सा सुकान्ति-कनकाम्बरा ॥ देवीकनकवर्णाभा कनकोत्तमभूषणा ॥ २ ॥ कमला-ङ्कुशपाशाब्जैरलंकृतचतुर्भुजा ॥ इन्दिरा कमला लक्ष्मीः सा श्रीरुक्मां बुजासना ॥ ३ ॥ या रक्तदन्तिका नामदेवी प्रोक्तामयाऽनघ ॥ तस्याः

ऋषि बोले कि नन्द से उत्पन्न होने वाली नन्दा भगवती को भक्ति पूर्वक स्तुति तथा पूजा करने से मनुष्य तीनों लोकों को वश कर लेता है ॥ १ ॥ सोना से भी उत्तम जिसकी कान्ति है और जिसके वस्त्र सुवर्ण के समान सुन्दर हैं और वह देवी कनक समान देदीप्यमान है ॥ २ ॥ और कमल, अंकुश, तथा शंख से चारों भुजा शोभित हैं,

इन्दिरा, कमला, लक्ष्मी, श्रीरुक्मा और कमलासना उनके नाम हैं ॥ ३ ॥ हे धर्मिष्ट ! रक्त दन्तिका नामक देवी जो मैंने कही थी उसका सम्पूर्ण भयनाशक स्वरूप कहता हूँ सुनो ॥ ४ ॥ जिसके श्रवण से मनुष्य सब पापों से मुक्त होता है इसमें कुछ संशय नहीं है लाल वर्ण और लालही सब अंगों के भूषणों से भूषित ।.५॥ रक्तआयुधलाल नेत्र

स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वं भयापहम् ॥ ४ ॥ यच्छ्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्रसंशयः रक्ताम्बरारक्तवर्णारक्तसर्वाङ्गभूषणा ॥ ५ ॥ रक्तायुधा र - नेत्रा रक्तकेशातिभीषणा ॥ रक्ततीक्ष्णनखा रक्तरसना रक्तदान्तिका ॥ ६ ॥ पतिंनारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजेज्जनम् ॥ वसुधेवविशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी ॥ ७ ॥ दीर्घौ लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनो-

और लाल ही केशवाली अत्यन्त भयंकर तथा रक्त तीक्ष्ण मुखवाली लाल आसन पर स्थित लाल दाँत वाली देवी ॥ ६ ॥ अपने पति के अनुकूल जैसे स्त्री रहती है उसी प्रकार देवी भक्त जनों के वश में रहती है वह पृथ्वी के तुल्य विशाल है और उनके दोनों स्तन सुमेरु गिरि के समान हैं ॥ ७ ॥ वे दोनों स्तन बड़े लम्बे अति स्थूल मनो-

हर बड़े कान्तिमान और सब प्रकार आनन्द के रूप हैं ॥ ८ ॥ ऐसे सब कामनाओं को देने वाले दोनों स्तनों को देवी अपने भक्त जनों को पिलाती हैं और खड्ग पात्र शिर तथा ढाल से चारों भुजायें शोभित हैं ॥ ९ ॥ और रक्त चामुण्डा तथा योगेश्वरी देवी

हरौ ॥ कर्कशावतिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयोनिधी ॥ ८ ॥ भक्तान्संपाययेद्देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ ॥ खड्गपात्रशिरः खेटैरलं-कृत चतुर्भुजा ॥ ९ ॥ आख्याता रक्तचामुण्डा देवी योगेश्वरीति च ॥ अनया व्याप्तमखिलं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥ १० ॥ इमां यः पूजये-द्भक्त्या सव्याप्नोति चराचरम् ॥ (भुक्त्वा भोगान्यथाकामं देवीसायुज्य माप्नुयात्) ॥ ११ ॥ अधीते य इमं नित्यं रक्तदन्त्या वपुः स्तवम् ॥

के नाम से विख्यात हैं तथा इनसे सब जगत् स्थावर और जंगम व्याप्त है ॥ १० ॥ जो इनका भक्ति पूर्वक पूजन करता है वह चराचर में व्याप्त हो यथेष्ट भोगों को भोगकर देवी के पद को प्राप्त होता है ॥ ११ ॥ जो पुरुष रक्तदन्तिका के इस स्तव का पाठ करता है देवी उसकी ऐसी परिचर्या करती है कि जैसे स्त्री अपने प्रिय पति की ॥१२॥

शाकम्भरी देवी का नील वर्ण, नील कमल के समान नेत्र, गम्भीर नाभी और त्रिवली से भूषित सूक्ष्म उदर है ।।१३।। कड़े, समान, ऊंचे, गोल, मोटे, मिलेतथा चिकने स्तन हैं, मुट्ठी में कमल जिस पर भ्रमर गुञ्जार कर रहे हैं कमलपर लक्ष्मीविराजमान हैं।।१४।। फूल, पल्लव,

तं सा परिचरेद्देवी पतिंप्रियमिवाङ्गना ॥ १२ ॥ शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना ॥ गम्भीरनाभिस्त्रिवली विभूषित तनूदरी ॥ १३ ॥ सुकर्कशसमोत्तुङ्गवृत्तपीनघनस्तनी ॥ मुष्टिंशिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥ १४ ॥ पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं शाकसञ्चयम् ॥ काम्यानन्तरसैर्युक्तं क्षुत्तृण्मृत्युजरापहम् ॥ १५ ॥ कार्मुकं च स्फुरत्कान्ति विभर्ति परमेश्वरी ॥ शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ १६ ॥ विशोका दुष्टदमनी शमनी दुरितापदाम् ॥ उमा गौरी

मूल तथा फल से युक्त, अनेक सुन्दर रसोंवाले और क्षुधा तृष्णा मृत्यु तथा वृद्धावस्था को दूर करने वाले शाक समूह ॥ १५ ॥ और चमकते हुए कांति वाले धनुष को धारण करती है सो परमेश्वरी शाकम्भरी शताक्षी और दुर्गा कही गई है ॥ १६ ॥ वही उमा,

गौरी, सती, चण्डी कालिका और पार्वती है। जो मनुष्य शाकम्भरी का ध्यान, जप, पूजन और नमस्कार करता है ॥ १७ ॥ वह अन्न पान अमृत और फल शीघ्र ही निरंतर पाता है। भीमा देवी का भी नील वर्ण है दंष्ट्रा और दाँत बड़े कांतिमान हैं ॥१८॥

सती चण्डी कालिका सा च पार्वती ॥ शाकम्भरींस्तुवन्ध्यायञ्जपन्सं-पूजयन्नमन् ॥ १७ ॥ अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्नपानामृतं फलम् ॥ भीमापि नीलवर्णा सा दंष्ट्रादशन भासुरा ॥ १८ ॥ विशाल-लोचना नारी वृत्तपीनपयोधरा ॥ चन्द्रहासं च डमरुं शिरः पात्रं च बिभ्रती ॥ १९ ॥ एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ॥ तेजोमण्डलदुर्धर्षा भ्रामरी चित्रकान्तिभृत् ॥ चित्रानुलेपनादेवी चित्राभ-रणभूषिता ॥ २० ॥ चित्रभ्रमरसंकाशा महामारीति गीयते ॥ इत्येता

विशाल नेत्र तथा स्थूल कुच हैं और खड्ग डमरू शिर, तथा पात्र धारण किये हैं ॥ ॥ १९ ॥ वही एक वीरा, कालरात्रि, कामदा, तेजोमण्डल दुर्धर्षा, भ्रामरी, चित्रकांतिभृत् ॥ २० ॥ चित्रभ्रमरसंकाशा और महामारी इन नामों से गाई जाती हैं। हे राजन् !

इन देवियों की मूर्तियाँ विख्यात हैं ॥ २१ ॥ ये मूर्तियाँ जगन्माता चंडिका की कामधेनु कहलाती हैं। यह चरित्र अत्यन्त गुप्त है इसे किसीसे नहीं कहना चाहिये ॥२२॥ तुम

मूर्तयोदेव्याव्याख्याता वसुधाधिप ॥ २१ ॥ जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्तिताः कामधेनवः ॥ इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित्त्वया आख्यानंदिव्यमूर्तीनामभीष्ट फलदायकम् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनदेवींजप निरन्तरम् ॥ सप्तजन्मार्जितैर्घोरैर्ब्रह्महत्यासमैरपि ॥ पाठ मात्रेणमन्त्राणां मुच्यंतेसर्वकिल्विषैः ॥ देव्याध्यानम्मयाख्यातङ्गुह्याद्गुह्यतरम्महत् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सर्वकामफलप्रदम् ॥२२॥ व्याख्यानं दिव्यमूर्तीं नाम-धीष्वावहितः स्वयम् ॥ रात्रिरूपा यतोदेवी दिनरूपो महेश्वरः ॥ तस्माद्रात्रौ सदाकुर्याद्देव्याध्यानं जपादिकम्॥एतस्यास्त्वं प्रसादेन सर्वमान्यो भविष्यासि

स्वयं इन मूर्तियों की व्याख्या को सावधान हो पढ़ो। रातका रूप देवीका है दिनका रूप महादेवका है इससे रातके समय देवीका ध्यान जप पाठ पूजा करे। इसके प्रसादसे तुम सबके

मान्य हो जाओगे ॥ २३ ॥ देवी सर्व रूपमयी है और समूचा जगत् देवीमय है अतएव

॥ २३ ॥ सर्वरूपमयी देवी सर्वं देवीमयं जगत् ॥ अतोऽहं विश्वरूपां त्वां नमामि परमेश्वरीम् ॥ १४ ॥

मैं विश्वरूपी परमेश्वरी को नमस्कार करता हूँ ॥ २४ ॥

॥ इति मूर्तिरहस्यं समाप्तम् ॥

अथ चण्डीशाप विमोचनम् ।

ॐ अस्य श्रीचण्डीशाप विमोचन मंत्रस्य वसिष्ठ नारद सामवेदाधिपतिब्राह्मणाः ऋषयःसर्वैश्वर्य कारिणी श्रीदुर्गादेवता अनुष्टुप्छन्दः चरितत्रयं वीजं ह्रीं शक्तिःदेवी रूपिणी चण्डी शाप विमोचने विनियोगः॥

ॐ रीं रेतःस्वरूपायै मधुकैटभ मर्दिन्यै ब्रह्मशाप विमुक्ताभव । ॐ वीं बुद्धिरूपिण्यै महिषासुर सैन्य नाशिन्यै ब्रह्म० । ॐ रं रक्त

रूपिरायै महिषासुर मर्दिन्यै ब्रह्म० । ॐ क्षुं क्षुधा रूपिरायै देव नान्दिन्यै ब्रह्म० । ॐ छां छाया रूपिरायै दूत संवादिन्यै ब्रह्म० । ॐ श्रीं शक्ति रूपिरायै धूम्रलोचन घातिन्यै ब्रह्म० । ॐ तृं तृष्णा रूपिरायै चराड मुराड वध कारिरायै ब्रह्म० । ॐ क्षां क्षान्ति रूपि- रायै रक्तबीज वध कारिरायै ब्रह्म० । ॐ जां जाति रूपिरायै निशुम्भ वध कारिरायै ब्रह्म० । ॐ लं लज्जा रूपिरायै शुम्भ वध कारिरायै ब्रह्म० । ॐ शां शान्ति रूपिरायै देवस्तुत्यै ब्रह्म० । ॐ श्रं श्रद्धा रूपिरायै फलदात्र्यै ब्रह्म० । ॐ कां कान्ति रूपिरायै राजवरदात्र्यै ब्रह्म० । ॐ मां मातृरूपिरायै अर्गला सहितायै ब्रह्म० । ॐ ह्रीं श्रीं हूं दुर्गायै सर्वैश्वर्य कारिरायै ब्रह्म० । ॐ क्लीं ह्रीं नमः शिवायै अभेद कवच रूपिरायै ब्रह्म० । ॐ काल्यै कालि ह्रीं फट् स्वाहायै ऋग्वेद रूपिरायै ब्रह्म० । इत्येवं हि महामंत्रान् पठित्वा परमेश्वरी । चराडीपाठं

दिवारात्रौ कुर्यादेव न संशयः ॥ एवं मंत्रं न जानाति चण्डीपाठं करोति यः । आत्मनश्चैव दातृणां क्षयं कुर्यान्न संशयः ॥

❀ इति श्रीरुद्रयामले चण्डी शाप विमोचनं समाप्तम् ❀

अथ कुञ्जिका स्तोत्रम् ।

शिव उवाच ।

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम् । येन मंत्र प्रभावेण चण्डीजापः शुभोभवेत् ॥ १ ॥ कवचं नार्गला स्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् । न सूक्तं नापिवा ध्यानं नन्यासो न नवार्चनम् ॥ २ ॥ कुञ्जिका पाठमात्रेण दुर्गापाठ फलं लभेत् । अति गुह्यतरं देवि देवानामपि दुर्लभम् ॥ ३ ॥ गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति । मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम् ॥४॥ पाठमात्रेणसंसिद्धयेत् कुञ्जिका

स्तोत्रमुत्तमम् । ॐ श्रूँ श्रूँ श्रूँ शं फट् ऐं ह्रीं क्लीं ज्वलउज्ज्वलप्रज्वल ह्रीं ह्रीं क्लीं स्रावय स्रावय शापं नाशय नाशय श्रीं श्रीं श्रीं जूंसः आदाय स्वाहा । ॐ श्लों हुँ क्लीं ग्लों जूंसः ज्वलोज्ज्वल मंत्रं प्रवल हं सं लं त्वं स्वाहा । नमस्ते रुद्ररूपायै नमस्ते मधुमर्दिनि । नमस्ते कैटभाशिन्यै नमस्ते महिषार्दिनि । नमस्ते शुंभहन्त्यै च निशुम्भासुरसूदनि । नमस्ते जाग्रते देवि जपे सिद्धिं कुरुष्व मे । ऐं, कारी सृष्टिरूपायै ह्रीं कारी प्रतिपालिका ॥ क्लीं काली कालरूपिण्यै वीजरूपे नमोस्तुते ॥ चामुण्डा चण्ड रूपा च यैङ्कारी वरदायिनी ॥ विच्चेत्वभयदा नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणि । धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वागीश्वरीं तथा। क्रां क्रीं क्रूं कुञ्जिका देवि शां शीं शूंमेशुभं कुरु। हूं हूं हूं कार रुपायै जां जीं जूंभाल नादिनी। भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमोनमः। ॐ अं कं चं टं तं पं सां विदुरां २ विमर्दय २ ह्रीं त्रां त्रीं स्त्रीं जीवय जीवय त्रोटय त्रोटय जंभय

जंभय दीपय दीपय मोचय मोचय हुँ फट् जां वौषट् ऐं ह्रीं क्लीं रंजय रंजय संजय संजय गुंजय गुंजय बंधय बंधय भ्रां भ्रीं भ्रूँ भैरवी भद्रे संकुंच संचल त्रोटय त्रोटय म्लीं स्वाहा । पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खाँ खीं खूँ खेचरी तथा । म्लां म्लीं म्लूं मूल विस्तीर्णा कुञ्जिका स्तोत्र हेतवे । अभक्ताय न दातव्यं गोपितं रक्षपार्वति ॥ विहीना कुञ्जिका देव्या यस्तुसप्तशतीं पठेत् । न तस्यजायते सिद्धिर्ह्यरण्ये रुदितं यथा ।

❀ इति श्री रुद्रयामले गौरी तन्त्रे कुञ्जिका स्तोत्रं सम्पूर्णम् ❀

अथ उत्कीलन मन्त्रः ।

ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशतिचण्डिके उत्कीलनं कुरु कुरु स्वाहा ।

इस उत्कीलन मंत्र को २१ वार पढ़े, फिर इस प्रकार पाठ करके पुष्पाक्षत हाथ में लेकर हाथ जोड़ करके प्रार्थना करे ।

प्रार्थना—आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् । पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ॥ १ ॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि । यत्पूजितंमया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ २ ॥ अपराधसहस्राणि क्रियन्ते हर्निशंमया । दासोऽहमिति मां मत्वा प्रसीद परमेश्वरि ॥ ३ ॥ कामेश्वरी जगन्मातः सच्चिदानन्द विग्रहे गृहाणार्चामिमां प्रीत्या प्रसीद परमेश्वरि ॥ ४ ॥ सापराधोऽस्मिशरणं प्राप्तस्त्वां जगदम्बिके । इदानीमनुकम्प्योऽहं यथेच्छसि तथाकुरु ॥ ५ ॥ अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत् । यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥ अपराधोभवत्येव सेवकस्य पदे पदे ॥ कः परः सहते लोके केवलं स्वामिनीं बिना ॥ ६ ॥ यदत्रपाठे जगदम्बिके मया विसर्ग विन्द्वक्षरहीनमीरितम् । तदस्तुसम्पूर्णतमंप्रसादतः संकल्प सिद्धिस्तु सदैवजायताम् ॥ ७ ॥ यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् ।

सत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ॥ ८ ॥ अज्ञानाद्विस्मृते भ्रान्त्या-
यन्न्यूनमधिकं कृतम् । विपरीत तु तत्सर्वंक्षमस्व परमेश्वरि ॥ ९ ॥
यस्याःस्मृत्याचनामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ॥ न्यूनंसम्पूर्णतां यातु
त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥ १० ॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं च यद्भवेत् ॥
यत्स्तुतासि मयादेवि तस्मात्वं वरदाभव ॥ ११ ॥ कामेश्वरीजगन्मातः
सच्चिदानन्दाविग्रहे ॥ गृहाणत्वंस्तुतिमिमां प्रसीदकरुणानिधे ॥ १२ ॥
आवाहनं च पूजां च त्वन्माहात्म्यंजपन्तथा ॥ विसर्जनं न जानामि
चण्डिकेत्वंक्षमस्वमे ॥ १३ ॥ यन्मात्राविंदु विंदु द्वितय पद पद द्वंद्व
वर्णादिहीनं भक्त्या भक्त्यानुपूर्वं प्रकृतिगुणवशाद्व्यक्त मव्यक्तमंब ॥
मोहादज्ञानतोवा पठितमपठितं साम्प्रतं तेस्तवेऽस्मिन् तत्सर्वंसाङ्गमास्तां
भगवति वरदे त्वंप्रसादात्प्रसीद ॥ १४ ॥ मार्कण्डेयपुराणोक्तं देवी
माहात्म्य मुत्तमम् ॥ यःपठेच्छृणुयाद्भक्त्या तस्यमुक्तिर्न संशयः ॥१५॥

यामायामधुकैटभप्रमर्दिनी यामहिषोन्मूलिनी याधूम्रेक्षणचण्डमुण्डमथिनी या रक्तबीजाशिनी ॥ शक्तिः शुम्भ निशुम्भ दैत्यदलिनी या सिद्धि-लक्ष्मीः परा सा चण्डी नवकोटिशक्ति सहिता मां पातु सर्वेश्वरी ॥१६॥ गुह्यातिगुह्यगोप्त्रीत्वं गृहाणास्मत् कृतंजपं ॥ सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥ १७ ॥

अनेन सप्तशती पाठाख्येन कर्मणा श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवी च प्रीयतां नमम । इस प्रकार अर्पण करके आचमन पूर्वोक्त ॐ ऐं आत्मतत्वंशोधयामि नमः स्वाहा । ॐ ह्रीं विद्या० । ॐ क्लीं शिवतत्वं० । इन मंत्रों से करे, फिर ॐ स्वः भुवः भूः ॐ इसका उच्चारण करके आसन के नीचे जल गिरा कर उस जगह की मृत्तिका का चंदन अपने मस्तक पर लगावै ।

❀ इति दुर्गासप्तशती समाप्ता ❀

सं० १९९७ आषाढ़ शुक्ल २ ।

पं० श्रीलाल उपाध्याय द्वारा—श्री विश्वेश्वर प्रेस; बुलानाला काशी में मुद्रित ।